संवाद

(काव्य-संग्रह)

''कविता मूल रूप में एक संवाद ही है। कभी हम स्वयं को संबोधित करते हैं कभी समूह को संवाद की उद्देश्यता केवल एक ही है कि वह पुल बन कर नदी के दोनों किनारों को एक साथ जोड़ दे। पुल अपनेपन के प्रतीक होते हैं''

लेखिका

डॉ. (श्रीमती) सरोजिनी अग्रवाल

सम्पर्क सूत्र

ए-15 देवविहार कॉलोनी

कमिश्नर आवास के निकट

मुरादाबाद (उ. प्र.) 244001

मो. 9456011596

ISBN-978-93-81488-12-02

प्रकाशक : देशभारती प्रकाशन
डी-585, गली नं. 7,
अशोक नगर, शाहदरा दिल्ली- 93
मो. 9870425842
मूल्य : 100 रूपये
प्रथम संस्करण : 2021
कॉपीराइट : लेखिका (सरोजिनी अग्रवाल)
आवरणः अमित भारद्वाज

अपनी बात

साहित्य की कोई भी विधा हो सबका मूल आधार शब्द ही होते हैं। ये शब्द वैसे तो सुनने और पढ़ने में बड़े ही साधारण से लगते हैं। पर किसी संवेदनात्मक अनुभूति से जुड़ते ही वे अलौकिक आनंद के निर्झर से बहने लगते हैं। वस्तुतः भाव के अभाव में शब्द वर्णात्मक ध्वनियों से अधिक कुछ नहीं हैं। जैसे पारस का स्पर्श लोहे को सोना बना देता है उसी तरह अनुभूति की छुअन से वर्ण सुवर्ण बन जाते हैं।

मैंने लिखा है-

''शब्द नहीं,
अर्थ बड़ा होता है,
और अर्थ से बड़ा,
अनुभूति का वह क्षण है,
जो दोनों से,
जुड़ा रहता है,

अनुभूतियाँ भी जीवन की तरह बहुरंगी होती हैं। कभी कभी तो कोई अनुभूति सरिता के क्रमबदध प्रवाह की भाँति अपनी विविध भंगिमाओं के साथ एक ही दिशा में निरंतर बहती रहती है और कभी कभी वही अनुभूति एक ही छंद, गीत या कविता में बँध कर पूर्ण विराम ले लेती है। हर संवेदना स्वयं अपना रूपाकार सुनिश्चित करती हैं पर यह तथ्य निर्विवाद है कि जब भी कोई भावना शब्द

के शिशु रूप में जन्म लेती है तो रचनाकार को भी प्रसव-पीड़ा जैसी आकुलता को झेलना पड़ता है- ऐसा मेरा मानना है।

मेरी अपनी काव्यानुभूतियों का जहाँ तक संबंध है उनके लिए मैं एक दो ही तथ्यों का संकेत करना चाहूँगी। मेरे अनुभवों की परिधि व्यक्ति से लेकर विश्व तक फैली हुई हैं। उनमें निजी प्रसंगो के साथ सामाजिक समस्याओं विशेषतया राजनैतिक हलचलों और मानवीय मूल्यों के निरन्तर अधः पतन की प्रति अपनी प्रतिक्रियाओं को प्रतिबिम्बित किया गया है। मेरी काव्यानुभूतियों का एक यथार्थ यह भी हैं कि मेरी लेखनी कभी किसी विशेष विषय से बहुत समय तक बँधी नहीं रह पाई हैं। एक रचनाकार रूप में मेरी मनोदशा प्रायः उस तितली की तरह रही हैं जो एक बड़े से उपवन में खिले तरह तरह के फूलों को कभी छूते, कभी सहलाते और कभी मात्र क्षणभर को देखती, रुकती अपनी ही मस्ती में उड़ती रहती है, अतः मेरे काव्य-सृजन को विविध कालांशों के छोटे बड़े दर्पणों के रूप में संबोधित करना ही उचित होगा।

काव्य-शिल्प की दृष्टि से मेरी अभिव्यक्तियों में काव्यशास्त्रीय परम्परागत नियमों का पालन नहीं हो पाया है। इसका कारण संभवतः यह रहा है कि मेरी प्राथमिकता अपने मनोभावों को उसी तरह व्यक्त करना रहा जिससे उनके मूल आवेश सुरक्षित बनें रहें। मैंने अपनी अनुभूतियों को किसी बने बनायें छंदात्मक ढाँचें में फिट करने की कोशिश कभी नहीं की। मेरा सदा से यह विश्वास रहा है कि अनुभूति को अपनी अभिव्यक्ति का आकार स्वयं चुनने की पूरी स्वतंत्रता दी जानी चाहिए अन्यथा अन्य कोई प्रयास उस पर बलात्कार जैसा ही है।

मैं निसंकोच स्वीकार करती हूँ कि मेरी विधा चाहे मुक्तक रही हो चाहे छंदात्मक या मुक्त छंदात्मक विशेषतया ग़ज़ल के रचना-शिल्प का मुझे सम्यक् ज्ञान नहीं है फिर भी मैंने इन विधाओं के अनुरूप लिखने की अनधिकारी चेष्टा की है अतः वे निर्दोष नहीं हैं, न हो सकते हैं पर अपनी इस हठवादितााा का मेरे पास एक ही उत्तर है कि मैंने जो कुछ भी लिखा, जिस रूप में भी लिखा वह अधिकतर **'स्वान्तः सुखाय'** ही रहा है, यदि कुछ पाठक भी मेरे सुख में क्षण दो क्षण को भी सहभागी हो पायेंगे तो मुझे यह संतोष होगा कि मेरे प्रयोग नितांत निरर्थक नहीं रहे हैं।

'संवाद' मेरा तीसरा काव्य संकलन है। इससे पूर्व **'शब्द-कलश'** और **'आओ, पढ़े पढ़ायें'** प्रकाशित हो चुके हैं। इस संकलन में कुछ काफी पुरानी और कुछ बिलकुल नई रचनाओं को एक साथ लिया गया है।

'संवाद' का सहज अर्थ है वार्तालाप जिसमें प्रायः एक से अधिक पात्र होना अनिवार्य है। संवाद का एकमात्र लक्ष्य एक दूसरे को परस्पर जोड़ना है। मैंने अपने संवाद में कभी सामूहिक रूप से स्वजनों का आवाहन किया है और कभी केवल स्वयं अपने आपको संबोधित किया है। आयु के इस चौथे चरण में मुझे बार बार यह लगता है कि मेरे सुदीर्घ जीवन की बूड़ी सी अनुभूति-मंजूषा का सबसे छोटा पर सबसे अनमोल रतन है। प्रेम, प्रेम के रस में आदि से अंत तक डूबे मेरे शब्द। यदि हम सही शब्दों को चुनने और उन्हें निश्छल प्रेम भाव से बोलने की कला सीख लें तो शायद एक दिन प्रतिदिन सूखती जाती ज़िन्दगी की फुलवारी एक बार फिर से पहले की तरह महक उठेगी इसी भाव से 'संवाद' कविता को 'अपनी बात' के साथ ही जोड़ दिया गया है।

‘संवाद’ में संकलित अभिव्यक्तियों को चार वर्गों में रखा गया है-

1. मुक्तक : बहुरंगी
2. कवितायें : छंदवती
3. अनुभूतियाँ : अनछुई
4. पंक्तियाँ : ग़ज़लनुमा

सबसे अंत में ‘श्रदधांजलि’ शीर्षक से एक लम्बी कविता हैं ‘‘हमारे बाबू जी’। मेरे जन्मदाता श्री कांतिमोहन गर्ग एम.ए.एल. एल. बी, मात्र अड़तालीस वर्ष की आयु में 21 जुलाई 1959 को हम चार भाई बहनों को छोड़ कर चले गए थे। बाद में मैंने उनकी डायरियाँ पढ़ीं और तब मैं उनके व्यक्तित्व की विराटता को पहली बार समझ पाई और महसूस कर पाई। मेरे ये भावोद्‌गार सन 1970 के आस पास व्यक्त हुए जब मैं स्वयं तीन बेटों की माँ बन चुकी थी।

सच तो यह है कि ‘‘हमारे बाबू जी’ की कविता हम चारो भाई बहनों की साँसों में समाई उनकी स्मृतियों की सुगंध है, हमारे रोम रोम में बसी उनके उन सपनों की छुअन है जो उन्होंने हमारे लिए बुने थे। आज जब हम चारों अपने अपने जीवन के उत्तरार्ध को अपनी अनेक उपलब्धियों के साथ जी रहे हैं तो बस एक ही प्रार्थना करते हैं कि हे परमपिता,

अगर हमें अगला जन्म देना
तो देना वही वात्सल्यमयी गोद,
ममता की वही वही छत्रछाया,
देना हमें केवल एक ही विशेषण
कि हम वंशधर हैं
कांति के,

कि हम संताने हैं,

कांति की,

'संवाद' का एक ही सच है कि 'हमारे बाबू जी' केवल श्रद्धा भावभरित काव्य की साधारण पंक्तियाँ नहीं है जो उन्हें संबोधित करके मैंने लिखी हैं, ये तो हम चारो भाई बहनों के अन्तर्मन में हर पल ममता का आलोक फैलाने वाली बाबू जी की वे संजीवनी सुधियाँ हैं जो आज भी जब हम किसी द्विविधा में आकुल हो जाते हैं तो चुपचाप हमारे माथे को चूमकर बड़े प्यार से हमारे हर संशय का अँधेरा मिटा देते हैं और हमारे सामने प्रकाश के पुंज से भरा एक कर्मपथ सामने ला कर रख देते हैं और हर बार पहले की तरह ही मंद मुस्कान से कहते प्रतीत होते हैं- बच्चों, उठो, चलो, पूरे विश्वास से, पूरी निर्भयता से, बस अपने अपने कर्मपथ पर निरन्तर चलते रहो। तुम्हारे दृढ़ संकल्प के समक्ष ये ऊँचा हिमालय ये गहरा सागर यहाँ तक कि सर्व समर्थ काल भी बौना है- याद रखना- और बस ऐसे ही समझाते और चुप हो जाते।

'संवाद, काव्य संकलन का प्राण तत्त्व 'हमारे बाबू जी' की यही कविता है। यही इस संकलन की आदि प्रेरणा और यही इस संकलन की अंतिम परिणति है।

सरोजिनी अग्रवाल

संवाद

''अकेलेपन में
सारी दुनिया,
बदरंग लगने लगती है,
कोई एक भी,
पास में बैठा हो,
बोल रहा हो,
तो वही दुनिया
इन्द्रधनुष हो जाती है,
आओ, हर-सूने मन को,
छुयें, सहलायें,
उसे अपने साथ होने का
एहसास दें,
आओ, मौन को
कोलाहल बना दें,
संवादों की सुगंध से,
भर दे,
हर अकेलेपन को,
आओ,

संवाद

संवाद, एक पुल है,
जो जोड़ता है दो अलग अलग लोगों को,
नदी के किनारों की तरह,
शब्दों के अपनेपन से,

संवाद, एक मरहम है,
जो सहलाता है अंदर तक के घावों को,
माँ की लोरी की तरह,
प्यार भरी छुअन से,

आपस के मीठे संवादों से,
धीरे-धीरे अपने आप खुलने लग जाती हैं,
बरसों से बंद कुछ खिड़कियाँ,
खुला आसमान दिखाई देने लगता है,
बोलने लगता है सन्नाटा,
ठहरी हुई ज़िन्दगी की नदी,
फिर बहने लगती है नई दिशाओं में
अच्छी लगने लगती है,
सूनी अकेली साँझ,
रात में गहरी नींद आती है,

आओ मिल-जुल कर बैंठें,
बतियायें, बोलें,
कुछ हम कहें कुछ तुम कहो,
अपने अपने मन की परतें खोंले,
और एक बार फिर जीवन में,
कुछ नए रूप, रंग, रस घोलें,
आओं, आपस में बनायें संवाद,
अपनेपन से भरे मीठे संवाद,
मधु से, मिश्री से,
रस भरे संवाद,

विषयानुक्रम

मुक्तक : बहुरंगी

कवितायें : छंदवती

अनुभूतियाँः अनछुई

पंक्तियाँ : ग़ज़लनुमा

- हिंदी हिन्दुस्तान है
- नए वर्ष के शुभागमन पर
- फिर नया साल आया है
- लो फिर आ गया नया साल
- आह! यह कैसा आया नया साल
- दो विनोदिनी कवितायेंः किटी पार्टी और कहो कबीरा क्या करें?
- चुनावों के मौसम में आम जनताः तीन छंद
- आवाहन (कोरोना काल की कवितायें)
- उन सबको प्रणाम
- शत शत प्रणाम
- हम जीतेंगे
- हम तुम्हें नमन करते हैं

• तुमको प्रणाम

(3) अनुभूतियाँ अनछुई

• इस नये साल में
• आओ, हम सब मिलकर
• प्रेम-पाती के आख़र बनें हम
• वेलेन्टाइन डे
• इन्द्रधनुष
• आदमी की आस्था
• नहीं नाप सकता
• उत्तरहीन प्रश्न
• छोटी सी बात
• एक क्षण समर्पण का
• कल का गीत
• शायद अब
• राष्ट्रवंदन
• एक अकेली बूढ़ी औरत
• अपनी नई पीढ़ी के लिए
• मुझे यक़ीन है, पूरा यक़ीन हैं..
• बस तुम याद रखना
• जागो, हे ऋतम्भरा

(4) पंक्तियाँ : ग़ज़लनुमा

(5) श्रंद्धाजलि (हमारे बाबू जी)

मुक्तक : बहुरंगी

मुक्तक : बहुरंगी

उम्र, एक नदी की तरह बिना रुके,
अपने ढंग से बहती रही,
ज़िन्दगी, सैकड़ों दर्द, टूटे सपने,
चुपचाप ही सहती रही,
जब से मिली 'माँ निर्मला', ख़ुद ही,
बदल गईं सुख की परिभाषायें,
आनंद तुम्हारे ही अंदर है! बस,
बार बार यही कहती रहीं,

मुक्तक : बहुरंगी

चार दिन की मेहमान होती है ज़िन्दगी,
चंद साँसों का फरमान होती है ज़िन्दगी,
प्यार ही बोओ, प्यार ही काटो, बाँटो तुम,
प्यार से बड़ी आसान होती है ज़िन्दगी,

हम वक़्त को तो नहीं बदल सकते हैं,
लेकिन अपने को तो बदल सकते हैं,
आँसू की बूँद बन क्यों ढले यूँ ही,
सीप में मोती से भी ढल सकते हैं,

रोशनी बाहर नहीं, भीतर होती है,
दोस्ती दरिया नहीं, सागर होती है,
आदमी कैसे जिये, साँपों की बस्ती में?
ज़िन्दगी प्रश्न नहीं उत्तर होती है,

ज़िन्दगी है, मग़र मरदानी नहीं है,
दोस्ती का अर्थ कुरबानी नहीं है,
कैसे कहे कोई कहानी देश की?
आदमी की आँख में पानी नहीं है,

रोशनी सिर्फ गुज़री सदी हो गई,
दोस्ती स्वार्थ की त्रासदी हो गई,
कौन दो बूँद पानी किसे आज दे?
ज़िन्दगी एक सूखी नदी हो गई,

हर तरफ हो जंगलों का शोर, तो फिर क्या करें?
खुद हुआ सूरज सुबह का चोर, तो फिर क्या करें?
जो मसीहा है ज़मीं पर, प्यार का, इंसाफ का,
आदमी बन जाए आदमख़ोर, तो फिर क्या करें?

चलो, तो शूल पंथ के बुहार कर चलो,
जलो, तो अँधकार को पुकार कर जलो,
खुद पियो ज़हर, सुधा का दान दो मगर,
ढलो, तो सूर्य की तरह प्रकाश कर ढलो,

सारथी वही कि जो काल-अश्व मोड़ दे,
आदमी वही कि जो चक्रव्यूह तोड़ दे,
साँस, साँस में लिए आस्था की डोर को
ज़िन्दगी वही कि जो धूप छाँह जोड़ दे,

आदमी अक्सर बहुत असमर्थ होता है,
उम्र भर चलना मगर कब व्यर्थ होता है?
जिसकी हथेली में कई इतिहास बंदी हैं,
हर ज़िन्दगी का एक अपना अर्थ होता है,

जो स्वयं जलकर रोशनी दे, दीप होता है,
जो दर्द में भी ज़िन्दगी दे, मीत होता है,
जो भिगो दे प्राण को भी रसभरी बरसात में
जो तृप्ति की सौगात दे, वह गीत होता है,

इन मन के रिश्तों का, कोई नाम नहीं होता,
आँगन के फूलों का, कोई दाम नहीं होता,
जो चुपचाप लुटाता है, अपनी खुशबू औरों को,
चंदन गुमनाम भले हो, बदनाम नहीं होता है,

जीवन क्या है? आती जाती साँसों का अनुबंध,
चंदन क्या है? नागफनी पर महका कोई छंद,
और सृजन क्या? स्वाति मेघ से प्राण अचानक बरसें,
शब्द सीप से जुड़ जाये फिर मोती सा संबंध,

रात पूनम की नहीं, आँगन की होती है,
गाँठ रेशम की नहीं, बंधन की होती है,
यों तो अक्सर चाँदनी भी आग लगती है,
बात मौसम की नहीं, बस मन की होती है,

शब्द, शब्द में जहाँ अर्थ है और अर्थ में रस है,
बूँद, बूँद जिसकी है सोना, जो ख़ुद ही पारस है,
वैसे तो ऋतुओं की रचना विधि ने की है लेकिन,
जिसने रूप दिया उनको, ख़ुशबू दी, वह पावस है,

इन्द्रधनुष की रंग-राशि का अनावरण है, पावस,
धूप छाँह के बाहुपाश का उदाहरण है, पावस,
काम-कलश से घिरते बादल, मोर पंख इतराते,
रंग महल की प्रेम-प्यास का निराकरण है, पावस,

दर्पन के कब अपने होते प्रतिबिंबों के पाहुन?
आँगन की तुलसी में उगते जाने कितने अवगुन,
नहीं रीतियों से बँध पाते हैं बंधन प्राणों के,
मिलन यामिनी सा तन-मन हो, हर मौसम है फागुन,

सिकुड़ गए हैं दिन, या पसर गईं रातें?
उजड़ गए मधुवन, या बहुत हुए काँटे?
ये मौसम के हाव-भाव सहसा क्यों बदल गए?
पिछड़ गये फागुन, या आईं बरसातें?

शमा का खेल होता है, जला करते हैं परवाने,
हसीनों की अदा होती, मिटा करते हैं दीवाने,
सज़ा मिलती है दुनिया में, हमेशा बे़गुनाहों को,
क़यामत की नज़र उठती, गिरा करते हैं पैमाने,

हर ताज़महल के पहलू में मुमताज़ नहीं होती है,
हर दर्द भरे नग़मे में, आवाज़ नहीं होती है,
यों तो लहरों का आना जाना, चलता ही रहता है,
पर साहिल के तूफानों की अंदाज़ नहीं होती है,

जहाँ पानी बरसता है, वहीं बरसात होती है,
जहाँ तारे निकलते हैं, वहीं बस रात होती है,
यों तो अक़्सर महफिलों में शोर होता है,
जहाँ हम आप होते हैं वहीं कुछ बात होती है,

जो हार कहीं पर जाता है, ईमान नहीं होता,
जो प्यार नहीं कर पाता है, इंसान नहीं होता,
जिसकी छाया में टूटे विश्वास नहीं जुड़ पाते,
वह पत्थर का टुकड़ा है, भगवान नहीं होता,

चटख़ गए दर्पन या बदल गए चेहरे?
सब के सब प्रतिबिंब आज आधे अधूरे,
ज़िन्दगी शतरंज बन गई है शायद अब,
आदमी रह गए सिर्फ लकड़ी के मोहरे,

साँस नहीं अपनी है, समय नहीं अपना,
मृत्यु नहीं अपनी है, जन्म नहीं अपना,
दर्पण की जो छाया अपनी लगती, वो भ्रम है,
छाँह नहीं अपनी है, रूप नहीं अपना,

जो देने में सुख पाता है, नीलगगन होता है,
जो मन का तम पीता वह दीप, नयन होता है,
जिसको पाने का लोभ मरण के बाद बना रहता है,
वह मान नहीं, भगवान नहीं, बस एक वतन होता है,

सूरज, चाँद, सितारे लाखों, रहते एक गगन में,
जुही, चमेली, गेंदा खिलते, देखो एक चमन में,
किसी नाम से याद करो, भगवान नहीं दो होते,
एक हार के हैं सब मोती, अपने एक वतन में,

कोई चंदन बन महका देता है, घर आँगन को,
कोई बंधन बन दहका देता है, पूरे जीवन को,
बात नहीं है परिचय की, बस अपनेपन की है,
कोई सावन बन बरसा देता, नवरस तनमन को,

काले नागों की छाया में जो गंध लुटाता, चंदन है,
पीले पतझर की माया में जो रूप खिलाता, मधुवन है,
छोटे से घेरे में बँधकर रूक जाने वाली नदी नहीं है,
चट्टानों को तोड़ नियति को ठुकराता, जीवन है,

धारा इठलाती इसीलिए, तट की बाँहों का बंधन है,
घाटी इतराती इसीलिए, आँचल में सोया चंदन है,
यौवन क़ोरा काग़ज़ है यदि ढाई आख़र नहीं लिखे,
माटी भर जाती ख़ुशबू से जीवन का साथी, सावन है,

जन्म क्या? साँस का सिलसिला,
मृत्यु क्या? रूक गया क़ाफिला,
ज़िन्दगी का सफर बूँद सा है यहाँ,
सिंधु की गोद या रेत का घर मिला,

संचरण के लिए बंद है हर गली,
आमरण क़ैद सी उम्र सारी ढली,
कर न पाया कभी स्वार्थ की संधियाँ,
आक्रमण के लिए बात मेरी चली,

आँसुओं से अगर पत्थर नम होते,
ज़िन्दगी में कुछ और ही ग़म होते
रंग देती ग़र हिना पिसने से पहले,
आदमी के भरम बहुत कम होते,

रोशनी है कहाँ? रात ही रात है,
दोस्ती यदि मिले, भाग्य की बात है,
आज के दौर में आदमी के लिए,
ज़िन्दगी दर्द की एक बारात है,

रूप से रास्ते भी, महक जायेंगे,
नेह की आग से, तन दहक जायेंगे,
आँख से कोई आवाज़ दे दे अगर,
आदमी क्या? फरिश्ते बहक जायेंगे,

रेशम से रिश्ते तार तार हो गए,
ज्ञान के शिवाले बाज़ार हो गए,
अब किसी की आँख में पानी नहीं है,
आदमी बेशरम अख़बार हो गए,

जीना नहीं है आसान इस ज़माने में,
लोग बड़े माहिर हैं, खुशियाँ चुराने में,
अ़जूबा नहीं लगती हैं, ग़ैरों की बेवफाइयाँ,
उम्र लगती है अपनों के ज़ख़्म भुलाने में,

कभी पानी तो कभी आग सी लगती है ज़िन्दगी,
कभी गुणा सी तो कभी भाग सी लगती है ज़िन्दगी,
जिस ढंग से देखो उसी रंग की लगने लगती है वो,
कभी दुआ सी तो कभी दाग़ सी लगती है ज़िन्दगी,

सुबहें भी कम नहीं हैं, रातें भी कम नहीं,
बाते हैं अगर ग़म की, तो बरातें भी कम नहीं,
दिल में ग़र सुकूँ हो तो कोई ग़िला नहीं
उजड़े हैं कुछ चमन तो, बरसातें भी कम नहीं,

'मैं' से ऊपर 'हम' वन कर हरदम सोचें,
अमन चैन की बात करें, रिश्तों को सींचें,
एक ख़ुदा के वंदे हैं हम सब ही जब,
आपस में नफरत की दीवारें क्यों खीचें?

ख़ुद भी रहो और उन्हें भी रहने दो,
जिस ओर बहें, खुल कर बहने दो,
अपनी मरज़ी से सोये जागें वे,
मेरा भी घर है' उनको कहने दो,

प्रज्ञा के ये पुरस्कार लौटाने से क्या होगा?
शब्दों के ये अग्नि बाण बरसाने से क्या होगा?
माना कि हुए आहत हो, संवेदना नहीं मिली,
नफरत के ये नागपाश फैलाने से क्या होगा?

तुम हो प्रतिभा के सूर्य, जगत का तमस मिटाने आए हो,
सतयुग के हो सूत्रधार, सब असत् हटाने आए हो,
मत भूलो अपना राष्ट्र धर्म, संयम से संवाद करो,
तुम तो कल के निर्माता हो, तुम आज बनाने आए हो,

कोई शांति-वार्त्ता नहीं, हमें शीघ्र प्रतिकार चाहिए,
कोई कविता-कथा नहीं, रण भेरी की हुंकार चाहिए,
अंगारे बरसाओ नभ से, या तुम दावानल वन धधको,
हमको अब दुश्मन के शीशों का, शतलड़ा हार चाहिए,

बहुत हो चुका खेल पाक के नापाक़ इरादों का,
वह तो है ही सरताज़ हमेशा झूठे वादों का,
बहुत हुआ अब नहीं रहेंगे चुप, इतना तुम सुन लो,
नहीं उठा सकते है बोझा हम दर्दीली यादों का

हमको अब बातें नहीं कोई ठोस काम चाहिए,
अपनी भारत माँ का वही सुनहरा नाम चाहिए,
हमको अपनी केसर घाटी, अपना राम चाहिए,
हमको इस दहशत ग़र्दी पर पूर्ण विराम चाहिए,

अल्हड़ कलियाँ पहनें फिर से लाल गुलाबी चोली,
बौराये भँवरों की निकले गुनगुन गाती टोली,
सूनी गलियाँ आलिंगन के छंद लगें लिखने जब,
धानी चुनरी रंग जाये पीली, तो समझो होली,

शब्दों के खाली कलशों में सब रंग हमीं भरते हैं,
अपनेपन की डाली हो यदि, वे फूलों से झरते हैं,
फागुन में सब बौराते हैं, गदराये आमों जैसे,
आओ, हम भी आज यहाँ कुछ हँसी ठिठोली करते हैं,

यह सच है कि आज कल हर ज़गह,
सवालों के जंगल बड़े घने कँटीले हैं,
यह सच है कि इस वक्त हर रास्ते पे,
बेइन्तिहा काँच औ पत्थर नुकीलें हैं,
लेकिन ग़वाह है तवारीख़ इस सच की,
कि आदमी के लिए कुछ भी नामुमकिन नहीं,
ठान ले अगर कुछ करने की वह तो,
पिघल जाते हैं पर्वत जो बर्फीले हैं,

कवितायें : छंदवती

हिंदी, हिन्दुस्तान है

जन्मी देवबानी सी, जननी सी ऋतम्भरा,
हिन्दी हमारी ज्ञान-रतननि की खान है,
केसर की गंध सी फैली है दसों दिशा,
सबकी सुख देनी वो तिरबेनी समान है,
कौन सी तराज़ू पे तोलोगे वाको तुम,?
हिंदी है बिंदी माँ की, मुक्ति का विधान है,
भाषा नहीं है वो, परिभाषा है देश की,
प्रान है, पहचान है, हिंदी हिंदुस्तान है

(14 सितम्बर-हिंदी दिवस 2018)

नए वर्ष के शुभागमन पर

नया साल आया है, आओ जाने से पहले
कुछ नए शिखर छूने की बात करें,

एक एक पल बीत रहा है,
साँसों का जल रीत रहा है,

क्या जानें यह सफर ज़िन्दगी का,
कब कहाँ अचानक थम जाये?

आओ, थकने से पहले
कुछ नूतन सपने बोने की बात करें,

अब तक सबको सुख बाँटे हैं,
फूल दिए, बीने काँटे हैं,

क्या पता शाम का सूरज कब
किस वक़्त अचानक छिप जाये?

आओ, सोने से पहले,
कुछ नए दिए रखने की बात करें,

फिर नया साल आया है

फिर नया साल आया है,
कुछ नई धूप, कुछ नई छाँह लाया है,

कितनी धूप चुनें हम, कितनी छाया?
तुम भी सोचो, मैं भी सोचूँ,

गिने चुने पन्ने ही बाक़ी हैं,
ढलते जीवन के,
कई अधूरे स्वप्न किंतु हैं
अब भी इस मन में,

कल तक तो हम रहे बराबर चलते ही,
अब विश्राम करें या कुछ और चलें?
तुम भी सोचो, मैं भी सोचूँ,

चाह यही है, सुखी रहें सब
पर कितना वश है?
ईश्वर की मरज़ी के आगे,
दुनिया बेबस है,

अपना, अपना भाग लिखाकर, हर कोई आता है,
सबकों देखें या केवल प्रभु को याद करें?
तुम भी सोचो, मैं भी सोचूँ,

जितना हो सका किया हमने,
तन, मन, धन वारा,
अपने से ज़्यादा अपनों को
समय दिया सारा,

पर अब रात रात भर नींद नहीं आती है,
अब भी मोह करें या माया ममता छोड़ें?
तुम भी सोचो, मैं भी सोचूँ,

लो, फिर आ गया नया साल

लो, फिर आ गया नया साल,
मीठी यादें, मीठे सपने,
लाया ऊनी झोली में डाल,
लो, फिर आ गया नया साल,

चाहें तो बीती बातें,
बार बार दुहरायें,
चाहे उम्मीदें बाँधें,
फिर हर पल घबरायें,

चाहें तो अपने मन को
धारा में बहने दें,
बैठे रहें नियति को लेकर,
सब कुछ सहने दें,

या फिर आगे बढ़कर कुछ निर्णय नये करें,
कैसे जीना मरना है अब,?
तुम भी सोचो,
मै भी सोचूँ,

आओ, अब इस चौथेपन में,
ख़ुद से संवाद करें,
परमपिता से नाता जोड़ें,
उनको याद करें,

खिले रहें हम फूलों से,
हर क्यारी महकायें,
प्यार करें, बस प्यार करें,
देने का सुख पायें,

घर बाहर सब को अपने आँगन में आने दें,
ऐसा जीवन ही जीना है,
मैंने सोचा, तुम भी सोचो,

आह! यह कैसा आया नया साल?

आह! यह कैसा आया नया साल?
ऐसा घिरा अँधेरा,
मेरा सूरज डूब गया,

बीच राह में खड़ी रह गई,
मैं असहाय, अकेली,
एक घड़ी में क्रूर नियति नें
मेरी बिंदिया ले ली,

सुख-सुहाग से भरी हथेली क्षण में रीत गई,
ऐसा हुआ सबेरा, मेरा सरबस लूट लिया,

बंद हुईं दो आँखें ज्यों ही,
बंद हुए दरवाज़े,
पलक झपकते, रिश्ते बदले,
बदल गईं आवाज़ें,

अपना अपना जो कहते थे, पल में हुए पराये,
ऐसा किया अधूरा,
हर संबोधन टूट गया,

रेशम के गोले सी यादें,
नाग-दंश सी लगती,
बीती बातें आँसू बन कर
इन गालों पर ढलतीं,

कैसे फिर लौटा लाऊँ मैं अपने जीवन धन को?
सूना हुआ बसेरा मेरा साहिब रूठ गया,

(जीवन-सहचर के निधन पर मई 2005)

दो विनोदिनी कवितायें : 'किटी पार्टी' और 'कहो कबीरा क्या करे?'

किटी पार्टी

कलियुग में तो हो गया, बहना बड़ा कमाल,
किटी पार्टियों ने किया, हाल बहुत बेहाल,

मैडेम को फुरसत नहीं, जातीं रोज़ बाज़ार,
माता जी घर में रहें, बन कर चौकीदार,

बहुयें घर की मालकिन, बेटे हुए गुलाम,
सासें किचन सँभालतीं, जपतीं सीता राम,

नई-नई फरमाइशें, नये-नये हैं शौक़,
रोज महाभारत करें, बहुयें हैं बेख़ौफ़,

बड़की, छोटी एक सी, किया खुला ऐलान,
नहीं चलेगा आज से, सासू का फरमान,

बहुत कर चुकीं राज वे, अब है नई बहार,
रहना है तो चुप रहें, या जायें हरि के द्वार,

कहो, कबीरा क्या करें?

घर-बाहर में छिड़ी है, एक अनोखी जंग,
खान-पान की बात पर, मचा बड़ा हुड़दंग,
कहो, कबीरा क्या करें?

बीते कल के हो गए, लड्डू, मठरी, सेब,
मैगी, पीज़ा, पास्ता, चली विदेशी बेव,
कहो, कबीरा क्या करें?

सब्ज़ी और मसाले सब, अब हैं डिब्बा बंद,
पैकेट में मिलने लगे, रसगुल्ला, गुलकंद,
कहो, कबीरा क्या करें?

फल हो चाहे दूध हो, मट्ठा या कि पनीर,
अब ज़ारों में कैंद है, मेवा वाली खीर,
कहो, कबीरा क्या करें?

कोल्ड ड्रिंक में केंचुआ, मच्छर हैं नमकीन,
पानी में भी घुल रहा, ज़हरीला कोकीन,
कहो, कबीरा क्या करें?

रंग-बिरंगी पन्नियाँ, बड़े बड़े हैं नाम,
आधा परधा माल है, लेकिन पूरे दाम,
कहो, कबीरा क्या करें?
देसी आलू बिक रहा, परदेसी के भाव,
नदी हमारी, चल रही, उनकी नक़ली नाव,
कहो, कबीरा क्या करें?

कबिरा खड़ा बाज़ार में, लिए लुकाठी हाथ,
बहुत हुआ, अब छोड़ दे, मछुआरों का साथ,
कहो, कबीरा क्या करें?

अपनी प्याली लाख की, अपना पानी पी,
देख विदेशी प्लेट तू, मत ललचावे जी,
कहो, कबीरा क्या करें?

चुनावों के मौसम में आम जनताः तीन छंद

(1)

किसे किसे देखें हम, किसे किसे जानें?
कुरसी के लिए सजा हर दरबार है,
बड़े बड़े खड़े है खिलाड़ी शतरंज के,
दोनों ओर प्यादों की तीखी तक़रार है,
सबके ही चेहरों पर चेहरे चढ़े हुए,
असली न एक भी सब रंगें सियार हैं,
मछली के लिए तो सारे बगुले एक से
इसे चुनें, उसे चुनें, भूखी सरकार है,

(2)

सोच में पड़ा है मतदाता करे तो क्या?
इधर है कुआँ, उधर खाई तैयार है,
हाथ न हाथी, कोई साथी न ग़रीब का,
सड़क पर घिसट रहा साइकिल सवार है,
आप की तो बात ही न करें तभी भला
चार दिन की चाँदनी का उतरा ख़ुमार है,
एक आस ही बस बची है सबके पास,
कमल ही कर सके कोई चमत्कार है,

(३)

पीने को पानी नहीं, खाने को दाना,
सर पें है छत नाहीं, बेघर ज़िन्दगानी रे,
हाथन को काम नाहीं, आबादी दिन दूनी,
मँहगाई ऐसी जस सुरसा की कहानी रे,
आवे सरकार नयी, लेवै कछु फैसले,
जामे होवे भलाई सब कोई की,
जागे फिर सोई आस आम जनता की,
बीते ये पलभर, छावे मधुऋतु सुहानी रे,

(मई 2009)

कोरोना काल (मार्च 2020 से मई 2020 की कवितायें)

आवाहन

आओ, मिलकर दिया जलायें,
एक लौ ज़िन्दगी की, जगायें,

अपने संयम, साहस से,
कोरोना दूर करेंगे,
हम हरदम एक साथ हैं,
सबमें विश्वास भरेंगे,

अपनी भारत माँ को हम,
लाचार न होने देंगे,
अपने ही अनुशासन से,
हर सवाल हल कर लेंगे,

यह प्रकाश का पर्व बने,
देश-भक्ति का आयोजन,
दिखला दें दुनिया को हम,
सबसे बलशाली, जन-मन,
आओ, दीपावली मनायें,
नई ऊर्जा, नवोत्साह पायें,
आओ, मिलकर दिया जलायें,

(21 मार्च 2020 जनता कर्फ्यू)

अपने देश के सभी सेवाभावी डाक्टरों के प्रति प्रणाम

जो रक्षक, जीवन-दायक हैं,
संकट में आज सहायक हैं,
उन सबको प्रणाम, शत शत प्रणाम,

कोरोना की आँधी में जो
दिया लिए, बेख़ौफ़ खड़े हैं,
बलशाली दुश्मन के आगे,
अपना सीना तान अड़े हैं,

जो महासमर के योद्धा हैं,
जो हार-जीत निर्णायक हैं,
उन सबको प्रणाम, शत, शत प्रणाम,

जो मानवता के नाते से,
सबकी सेवा में जुटे हुए,
सीधे, सच्चे सरल भाव से,
अपने पथ पर डटे हुए,

जो भगवान बने धरती पर,
जो वर्तमान के नायक हैं,
उन सबको प्रणाम, शत शत प्रणाम,

सभी जन-सेवकों की कठिन तपस्या पर

शत शत प्रणाम

अंगारों पर चल कर भी जो, देश बचाने वाले हैं,
उन सबको प्रणाम, शत, शत प्रणाम,

यह संकट का है विकट समय,
हर ओर बिछा, कोरोना है,
छिपे हुए साँपो के विष से
भरा हुआ कोना, कोना है,

फुंकारों को सहकर भी जो, प्राण दिलाने वाले हैं,
उन सबको प्रणाम, शत, शत प्रणाम,

कैसी यह लीला विनाश की?
कोई समझ नहीं पाया है,
अब तो घर, घर, शहर शहर में
बस ख़ौफ मौत का छाया है,

मँझधारों में फँसकर भी जो, नाव-चलाने वाले हैं,
उन सबको प्रणाम, शत, शत प्रणाम,

भारत माँ की जो संतानें,
अब अपनों के लिए अड़ी हैं,
अपनी चिंता छोड़, रात-दिन,
जो ड्यूटी पर हुई खड़ी हैं,

अँधियारों में रह कर भी जो, दीप जलाने वाले हैं,
उन सबको प्रणाम, शत, शत प्रणाम,

[मार्च 2020]

करोड़ों भारतीयो के अटल आत्म विश्वास पर

हम जीतेंगे

जीतेंगे, यह महासमर हम जीतेंगे,
हमको पढ़ना है फिर से, अपना उजला इतिहास,

कोरोना है यदि रावन, तो,
हम वंशज हैं श्री राम के,
और अगर वह दुष्ट कंस है,
हम हैं साथी धनश्याम के,

नहीं डरेंगे इस नरभक्षी राक्षस से हम,
हमको रखना है अपने मन में अटूट विश्वास,

युदध नहीं जीते जाते हैं,
केवल इच्छा या निर्णय से,
विजय सदा मिलती है सबको,
ख़ुद अपने दृढ़ निश्चय से,

नियम और क़ानून सिर्फ साधन भर होते,
हमको छूना है नूतन संकल्पों का आकाश,

कठिन समय है जीवन का यह,
मृत्यु बढ़ रही है अविराम,
केवल साहस संयम से ही,
लग सकता है इस पर विराम,

मोदी जी की सप्तपदी ही एक मार्ग है,
हमको करना है इस जगव्यापी संकट का नाश,

[14 अप्रैल 2020]

उत्तर-प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री योगी जी के प्रति

हम तुम्हें नमन करते हैं

तुम वामन हो कर भी विराट हो,
तुम भावी सतयुग के शंखनाद,
हम तुम्हें नमन करते हैं,
सौ सौ वंदन करते हैं,

देश-भक्ति में भीष्म सदृश,
देश-द्रोह में महाकाल हो,
न्याय-नीति के प्रबल पक्षघर,
हर अधर्म में अग्नि-ज्वाल हो,
तुम वर्तमान के आदित्य-लोक
तुम अंधकार प्रतिवाद,

भ्रष्टाचारों के समक्ष हो,
तुम महादेव के रौद्र-रूप,
काले घोटालों के आगे
हो प्रचंड काली-स्वरूप
तुम लोक-तंत्र के लौह-पुरुष,
तुम राम-राज्य संवाद,

योगी नहीं, कर्मयोगी तुम,
शांत-चित्त, निर्मल निष्काम,
वाणी में अंगार भरे हैं,
साधक, आत्मलीन, अविराम,
तुम शक्ति-भक्ति के तेज-पुंज,
तुम मोदी के अनुवाद,

[12 अप्रैल 2020]

प्रधानमंत्री श्री मोदी जी के प्रति

तुमको प्रणाम

तुम भारत के कर्णधार, तुम हो नवयुग के सूत्रधार,
तुमको प्रणाम, शत शत प्रणाम,

शब्दकोश में शेष नहीं है,
ऐसा कोई विशेषण,
जो कर पाये आज तुम्हारे
जीवन का विश्लेषण,

तुम महासिंधु से हो गहरे,
कोई ओर न पार,

सिंहासन पर भी विदेह हो,
साक्षी होगा इतिहास,
निर्मल कर्मयोग के आगे
झुक जायेगा आकाश,

तुम केवल कोई नाम नहीं,
तुम हो एक विचार,

तुम देश-धर्म के साधक हो,
सिदध किया हर बार,
विश्व-विजेता बने आज तुम,
बिना लिए तलवार,

तुम मानवता के तुंग शिखर,
एक नया अवतार,

[9 अप्रैल 2020]

3- अनुभूतियाँः अनछुई

इस नये साल में

हर बार, हर एक को मिलता है,
नया साल,
एक कोरे सफेद काग़ज
की तरह,

चाहें तो लिख लें उस पर
अपनी पुरानी विजय-गाथायें,
या टाँक लें नए सपनों के सितारे,
या फिर नाव बना कर छोड़ दें उसे,
समय की धारा में,
बहने को अपने आप चुपचाप,

चाहें तो बना लें अपनी सोच को बदरंग,
या रंगीन पतंग की तरह उड़ायें उसे,
ऊँचे और ऊँचे आसमान में,
या फिर, हाथ में पकड़े उसे,
बैठे रहें, नियति के आसरे,

हम जो भी चाहें कर सकते हैं,
आओ, इस बार जी लें हर पल को,

बीते यौवन की मौज़ मस्ती के साथ,
गीत ग़ज़ल गायें बार बार,
छोड़ दें व्यंग्य और निंदा को,
खेलें, खिलें और खिलखिलायें,
छोटे नटखट बच्चों की तरह,
आने वाले कल की किसी चिंता को,
अपने आज से न जोड़े,
अपने आप से संवाद करना सीखें,
इस नए साल में,
तो आओ, अपनी मुट्ठी में बंद,
इस साल के सफेद काग़ज को,
अपनी प्रतिभा की पताका बनाकर
फहरा दें,
अपने घर की छत के साथ,
अपने आसपास के परिवेश में,
फिर से एक बार,
एक नई नवेली सोच के साथ जियें,
इस नये साल में,

जनवरी 2010

आओ, हम सब मिलकर

आओ, आज हम सब मिलकर तोड़ें
कुछ बँधें बँधायें, छोटे छोटे दायरे,
तालाब से नदी बन जायें,

आओ, आज हम सब मिलकर जोड़ें,
अलग अलग अकेली पड़ी सूखती,
सभी जलधाराओं को,
दस बारह से शताब्दी बन जायें,

आओ आज हम सब मिलकर छोड़ें,
अपनी अपनी तनहाइयों की बातें,
नए नए संवादों की रंगोलियाँ रचें,
दादी से पहले बालिका वधू की आनंदी बन जायें,

मिलजुल कर बैठें, बोलें, वतियायें,
जी भर कर खिलखिलायें,
कभी कभी कर लें कुछ बौदिधक परिचर्चायें,
या सामयिक विषयों पर हलके फुलके वाद विवाद,
पर कभी कुछ भी ऐसा न घिरने दें,
जिससे धुँधलायें अपनापन,
हम आकुलता से प्रतीक्षा करें,

अपने स्नेह-सम्मेलन का,

कल के बासी अख़बार की ज़गह,
अपनी बेमिसाल ज़िन्दादिली से,
एक नई ताज़गी भरी सदी बन जायें

(24 जुलाई 2012 परिषद के पुर्नगठन पर)

प्रेम-पाती के आख़र बनें हम

बरखा की बूँदें,
किसी भी मौसम में हों,
मुझे तो हर बार वे,
बादल की लिखी, प्रेम-पाती के,
आख़र सी ही लगती हैं,

अपनेपन की ठंडी ठंडी
छुअन से भरी हर बूँद,
धरती के तन-मन को,
सहला देती है, और
नहला देती है उसके अकेलेपन को,
अपनी रस-भरी फुहारों से,
कुछ पल के लिए ही सही,
रोम, रोम खिलखिला उठता है,
धरा का, जल तरंग की तरह,

प्यार की खुशबू की बात ही,
कुछ और होती है,
हर चीज रमणीय लगती है,
हर सिंगार के फूलों की तरह,

अनुराग की यह कस्तूरी,
हम सबके अंदर है,
फिर भी भटकते हैं इधर-उधर,
हम सबके हिरन जैसे मन,

आओ, अपनी सुगंध को पहचानें हम,
और फैला दें अपनेपन की यह महक,
अपने चारों तरफ,
बरखा की बूँदों की तरह,
हम भी प्रेम-पाती के आख़र बन जायें,

वेलेन्टाइन डे
(प्रतिवर्ष 14 फरवरी को)

वेलेन्टाइन डे,
यानी आशिकों की आज़ादी का,
एक खास निश्चित दिन,

इस दिन वे जैसे चाहें, जिसे चाहें,
कर सकते हैं उससे,
अपनी मोहब्बत का इज़हार,

एक सुर्ख गुलाब, या,
दिल की शेप वाला कोई कार्ड,
या कोई प्रेम का पेन्डेन्ट,
या मोबाइल पर बार बार ईलू ईलू,
और या आई लव यू,
तुम सा नहीं देखा,
जैसे सैकड़ों रोमांटिक पैग़ाम,
क्योंकि यह दिन उनका बन चुका है,
सिर्फ उनका,

पर...

प्यार के नाम की जाने वाली,
ये सारी बेतुकी क़वायदें,
मुझे प्यार की नक़ली नुमाइशों सी लगती हैं,
अपनी इस धरती पर,
यह विदेशी तौर तरीक़ा,
अपनी नासमझी कीं,
नादानी की दास्तां जैसी लगती है,

आह! कितने कमज़ोर,
हो गए है हम?
जानबूझ कर भुला रहे हैं,
अपनी संजीवनी मर्यादाओं को,

सोचो, एक बार तो सोचकर देखो,
प्यार कोई विज्ञापन नहीं है,
न ही दुनिया को दिखाने की,
कोई अनोखी चीज़ है,
प्यार तो दो आत्माओं का,
अटूट बंधन है,
एक दूसरे के प्रति आजीवन,
अटूट समर्पण है,
प्यार तो अनुभूति है अंतर्मन की,
हृदय का मौन गुंजन है,

प्यार तो पूजा की अगरबत्ती सा,
चुपचाप गंध बिखेरता ही,
अच्छा लगता है,
प्यार जब खुले आम,
निर्वसन तन की तरह,
सामने आ जाता है,
तो सच मानो, पलक झपकते ही,
मंदिर की आरती की ज़गह,
कोठे की ग़ज़ल बन जाता है,

प्यार को प्यार ही रहने दो,
आत्मलीन आराधना से,
उसे बाजार का इश्तहार मत बनाओ,
उसे साल में सिर्फ एक दिन,
मत दिखाओ सबको,
वेलेन्टाइन डे की तरह,

इन्द्रधनुष

सफेद, ऊदे बादल,
घिरते हैं, घने होते हैं,
घनश्याम बन जाते हैं,
हर बार बरस जाते हैं,

चंदन की गंध,
कोहरे का चक्रब्यूह,
बार बार तोड़ती है,
हर बार महक जाती है,

सतरंगा इन्द्रधनुष,
पानी की परतों को,
पार करता है,
हर बार निकल जाता है,
क्योंकि
बादल, चंदन और इन्द्रधनुष,
उपनाम हैं,
अस्मिता के,
जिजीविषा के,
और ये कभी नहीं हारते,

आदमी की आस्था

एक साफ धुले,
सफेद मेज़पोश पर,
बिखर गई काली स्याही,
एक पृष्ठ पर लिखी,
कई सूक्तियों के अर्थ डूब गए,

सूरज भी डूब जाता है अक्सर,
जब सफेद बादलों के घेरे,
काले स्याह हो जाते हैं,

सोचती हूँ,
धूप की तरह फैले,
ज़िन्दगी के सीधे सपाट रास्ते पर,
जब टूटते संबंधों,
छूटते संदर्भों, और,
बढ़ती वर्जनाओं के,
स्याह धब्बे फैलने लगते हैं,
तो क्या
आदमी की आस्था नहीं डूबने लगती?

नहीं नाप सकता

घर से बाहर तक,
आँगन से देहरी तक,
छोटी सी दूरी है,

पर हर दूरी को,
इंचीटेप नहीं नाप सकता,

एक नन्हाँ सा बिंदु,
अपनी छोटी सी परिधि में,
बहुत बड़ा होता है,

बाहर के फैले घेरे में,
वृत्तों और रेखाओं की भीड़ में,
वह बेचारा खो जाता है

यह उसकी मज़बूरी है,
और हर मज़बूरी को,
इंचीटेप नहीं नाप सकता,

उत्तरहीन प्रश्न

किसी बंद कमरे की,
जंग लगी खूँटी पर,
टँगा हुआ, गीला कपड़ा,
सूख तो जाता है, पर,
अंदर की घुटन भरी सीलन,
और बदबू से,
वह बदरंग हो जाता है अक्सर,

उसी तरह,
मन की चारदीवारी में क़ैद,
भीतर के फैले,
सीमाहीन सन्नाटे में,
पंख कटे पक्षी की तरह,
चीखते, चिल्लाते, और,
मुटठी भर आसमान के लिए,
लोहे की सलाखों से,
सर टकराते,
उत्तरहीन प्रश्न,

थक कर अंत में,
उसी बेशरम अँधेरे में,
सो जाते हैं अक्सर,
आज का आदमी भी,
जी रहा है,
अनास्था के धब्बों से भरे,
कालचक्र के बीच,
वह समय के सूरज को,
मुँह तो चिढ़ाता है,
पर टूट जाता है अक्सर,

छोटी सी बात

सागर से सीपी तक,
शिखरों से घाटी तक,
एक सच यह है कि,
प्रायः छोटी सी बात,
कभी कभी बहुत बड़ी होती है,

आक्षितिज फैला हुआ,
यह रंग बिरंगा संसार,
हँसती धूप से भरा है, उजाला है,
पर उसके और मन के बीच,
एक अनकहा फासला है,

घर के छोटे से आँगन के,
हर कण, हर क्षण में,
अपनेपन की बड़ी मीठी खुश्बू है,
और वह नन्हीं सी गंध,
पूरे मधुबन से अधिक होती है,

बड़े बड़े कवियों ने कितने ही,
महाकाव्य लिख डाले हैं,
छंदो के कलशों में,

नवरस घोले हैं,
वाणी दी है जीवन की असंख्य छवियों को,
पूरा ब्रह्माण्ड तोला है, लेकिन,
कभी कभी,
सुधियों के मन्दिर में,
पूजा के दीपक की बाती सी,
किसी गीत की,
छोटी सी एक पंक्ति,
मन में, अकेली खड़ी होती है,
रेखांकित होती है,

एक क्षण समर्पण का

एक क्षण, समर्पण का,
तीन लोक डूब गए,
नैनों के झरोखों से,
कई स्वप्न झाँके,
देह के सागर में,
गंध का ज्वार उठा,
रूप भरे यौवन में,
उतरा वसंत,
कन कन केसर सा,
महक उठी मेंहदी,
बौराया मन बार बार,
आँचल सँवार उठा,

एक पल निमंत्रण का,
बंधन सब टूट गए,

शब्द अब मौन हुए,
अधरों के आँगन में,
नए अर्थ विहँसे,
पिघल गईं, अनायास,

मान की शिलायें,
रोम-रोम दहक उठीं,
अग्नि की शिखायें...,
तन-मन में,
हरसिंगार बरसे,
एक रस विसर्जन का,
आदि अंत डूब गए,

कल का गीत

टेसू की टहनी पर,
फिर महकेगा, लाल रंग,
फागुनी हवायें,
स्वच्छंद हो गई हैं,

आँगन की बाँहों में,
फिर चहचहायेगी,
गोरी गौरैया,
कोहरे की कारा से छूटेंगी,
फूलों की घाटियाँ,
बाँटेंगी किरनें फिर,
सोने की घंटियाँ,

चंदनी दिशायें,
आनंद बो गई हैं,

शायद अब

शायद अब,
काँटों के जंगल में,
फिर कोई चंदन महकेगा,

दुविधा की धुंध मिटी,
संशय के कोहरे,
किरणों ने तोड़ दिए,
मेघों के पहरे,

शायद अब,
सपनों के मरुथल में,
फिर कोई सावन बरसेगा,

नाटक का अंत हुआ,
उतर गए चेहरे,
पैदल से मात मिली,
हारे सब मोहरे,

शायद अब,
माटी के आँचल में,

फिर कोई जीवन सरसेगा,
पल पल सौगंध मिली,
क्षण क्षण अनुबंध,
कागज़ के फूलों से,
आने लगी गंध,

शायद अब,
नारों की हलचल में,
कोई जन मन गन कह देगा,

राष्ट्रवंदन

टूटे दर्पण के,
आड़े, तिरछे टुकड़ों में,
हर छाया, अपना सही रूप खो देती है,

धुँधले कोहरे की,
ठंडी, गहरी पर्तों में,
हर सूर्य किरण अपनी नियति पर रो लेती है,

मुझे लगता है,
आज आदमी भी,
ख़ोखले, नक़ली, आवरणों से घिर गया है,
अपनी ही नज़रों में खुद गिर गया है,

पर नहीं,
आदमी को उठना होगा,
बार-बार देखना होगा अपने आपको,
अपने ही चिन्तन के साफ दर्पण में,

मेरे लिए,
आज का दिन, उसी आवरणहीन

चिन्तन का दिन है,
यही आत्ममंथन है, यही जीवन-दर्शन,
और यही राष्ट्र-वंदन भी,

एक अकेली बूढ़ी औरत

एक अकेली बूढ़ी औरत थी,
उसके पास बहुत कुछ था,
बड़ी आलीशान कोठी,
चमचमाती नई कार,
फैशनेबल फरनीचर,
इम्पोर्टेड क्राकरी,
ब्रांडेड झाड़ फानूस, विदेशी पेटिंग्स,
और वेशकीमती शोपीसों के साथ,
बैंक में करोड़ों की एफ. डीज़ भी,

उसके तीन बेटे हैं, तीन पुत्र-वधुयें,
पाँच पोते पोतियाँ,
बेटे लायक हैं, पैसे वाले हैं,
काफी नाम है सोसाइटी में,
तीनों उसी एक शहर में रहते हैं,
अलग, अलग हवेलियों में,
और अपने अपने में ही,
पूरी तरह मस्त और,
अत्यंत व्यस्त हैं,

उस बूढ़ी औरत का एक कमरा है,
कमरे में पलंग हैं,
दीवार पर टँगा टी. वी है,
हैंडलाइन टेलीफोन है,
पुराने एलबम हैं,
दवाइयों के दो डिब्बे हैं,
जो उसके सिरहाने पड़े स्टूल पर,
रखे रहते हैं, पानी की बोतल के साथ,

उस बूढ़ी औरत की आँखें,
चौबीसों घंटे दरवाज़े पर,
और कान टेलीफोन पर लगे रहते हैं,
वह हर आहट पर चौंक पड़ती है,
और अक्सर बिना घंटी बजे ही,
टेलीफोन उठा लेती है,

कोठी में अन्दर बाहर,
ऊपर नीचे, कमरों से फाटक तक,
चारों तरफ एक सूना सन्नाटा है,
बस ग्रहसेवक बहादुर के आते जाते,
पैरों की आवाज़े कभी कभी,
सुनाई पड़ जाती हैं उसे,

वह अकेली बूढ़ी औरत जानती है कि,
उसके जिंदा रहते,

उसके तीनों बेटे कभी भी,
एक साथ इकटठें नहीं होंगे,
उसके पास,

क्योंकि सभी को कोठी चाहिए,
माँ नहीं,
उसका यही एहसास,
पके हुए घाव की तरह,
दिन-रात टीसता रहता है, उसकी रग रग में,
अन्दर ही अन्दर और,
वह कह भी नहीं सकती है,
अपना यह दर्द किसी से,
चुपचाप अपने को ही बहलाती रहती हैं,
कि यह सिर्फ उसका वहम है,
सच नहीं है,
वह हर रोज़ मर मर कर जीती है,
और ...
आज वह अकेली बूढ़ी औरत,
सचमुच भर गई,
तीनों बेटे, उसकी तेरहवीं के बाद,
एक साथ बैठे हैं, ड्राइंग रूप में,
पर वे माँ की नहीं,
कोठी की बात कर रहे हैं,
कोठी बिक जायेगी, तो
माँ की याद भी नहीं आयेगी,

अपनी नई पीढ़ी के लिए

सुनो, मेरे सभी स्वजनों सुनो,
हम सभी ने लगभग जी लिए हैं,
अपने अपने जीवन के तीन-चरन,
बचपन, यौवन और वानप्रस्थ,

अभी तक हम जैसे भी जिये हैं,
राम की तरह या रावन की तरह,
वह वक्त बीत चुका है और,
बीता हुआ वक्त कभी पीछे नहीं लौटता है,
किसी के लिए भी,
निरन्तर आगे बढ़ना उसका जन्मजात स्वभाव है,

अतीत का विश्लेषण करने से अच्छा है,
अपने आप का अवलोकन और,
एक गहरा आत्मचिंतन करें,
अपनी आने वाली पीढ़ी के लिए,

परमात्मा ने तो सबको दिया है यह जीवन,
गंगाजल की तरह निर्मल और,
पूजा के दीप सा, आलोकित उज्ज्वल,

यह तो हमारी ही अज्ञानता है, अंधकार है,
कि हमने अपनी आँखों पर,
तरह तरह के चश्मे चढ़ाकर,
विघटित कर दी है उसकी सारी अखंड सृष्टि,
हमने ही किया है उसकी अखंडता को खंड खंड,
और बनाई हैं आत्मघाती योजनायें,
सबके सर्वनाश के लिए,

सुनो, सुनो, मेरे प्रियजनों,
मेरी एक बात सुनो पूरे मन से,
आओ, अब अपनी आयु के इस,
आख़िरी पड़ाव पर,
जितनी भी साँसें शेष हैं यानी,
जीवन के हर बचे हुए अनमोल पन्नों पर,
हम लिखें केवल और केवल,
परमात्मा के प्रति अपनी कृतज्ञता की,
सच्ची सरल ऋचायें और निश्छल श्लोक,

आओ, अब हम अंकित करें हर शेष पृष्ठ पर,
सिर्फ और सिर्फ,
अपने अनुभवों की संजीवनी सूक्तियाँ,
और कालजयी संकल्पों की पंक्तियाँ,
जो भर दें नई ऊर्जा से हमारे वंशजों को,
हम इतना तो कर ही सकते हैं अब भी,
अपनी भावी पीढ़ी के लिए,

क्या जानें हम सबकी मिली जुली,
अनुभूतियों का यह संकलन,
एक पवित्र गुरु ग्रंथ ही बन जाये,
हमारे बच्चों के लिए,
हमारे आने वाले कल के लिए,
हमारी भावी पीढ़र के लिए,
क्या जानें?

मुझे यकीन है, पूरा यकीन है..

मुझे यक़ीन है कि,
कुदरत के इस दिल दहला देने वाले,
ख़ौफनाक मंजर के बाद भी,
ज़मीन के नीचे, अँधेरे में दफन हुए,
नेपाल में एक दिन फिर,
ज़िंदगी खिलखिलायेगी,
सुबह की सुनहरी धूप की तरह,
मुझे यक़ीन है, पूरा यक़ीन है,

मुझे यक़ीन है कि आज,
की पीढ़ी के कोमल मनों की धरती पर,
बोये जा रहे हैं जो विषैले बीज़,
कल उनकी सारी ज़हरीली फसल,
काटनी पड़ेगी इसी दुनिया को,
ज़िन्दगी दर्द से चीखेगी, चिल्लायेगी,
एक अपाहिज़ बच्चे की तरह,

मुझे पूरा यक़ीन है कि
अगर इन बचे हुए नन्हें मुन्ने खूबसूरत दियों को,
गुनाहों की तूफानी हवाओं से,

बुझने के पहले ही,
सहेज लें हम अपने अपने आँचल की ओट में,
एक ममतामयी माँ की तरह तो,
आने वाली सदी रोशनी से जगमगायेगी,
ख़ुशनुमा दीवाली की तरह,

मुझे यक़ीन है, पूरा यक़ीन है...
मुझे पूरा भरोसा है इंसानियत पर,
हममें से हर एक अपना हाथ,
आगे ज़रुर बढ़ायेगा,
इस बेरहम ग़म में डूबे नेपाल के लिए,
हम सब मिलकर एक साथ,
फिर से महकायेंगे इनकी बदरंग हुई फुलवारी को,
चम्पा, चमेली और बेला के फूलों से,
मुझे यक़ीन है, पूरा यक़ीन है...

(नेपाल में आए भयानक भूकंप पर)

बस तुम याद रखना

हर वर्ष मैं चाहती हूँ कि,
स्वाधीनता के पावन पर्व को,
प्रणाम करूँ, अपनी उस कविता से,
जिसके शब्द शब्द में भरी हो,
जननी जन्मभूमि के लिए अनन्य श्रद्धा,
और जिसकी पंक्ति पंक्ति जुड़ी हो,
मेरी हार्दिक राष्ट्रीय आस्था से,
जो निर्मल दर्पण हो,
मेरे अन्तर्मन की अस्मिता का,

लेकिन.....
लेकिन जैसे ही मैं उठाती हूँ लेखनी,
आघात होने लगते हैं,
मेरी संवेदना के द्वारों पर,
बँधुआ बाल श्रमिकों की चीखों के,
कुँवारी किशोरियों के चीत्कारों के,
और दहेज़ की आग में जलाई जाती
अबलाओं के हा हा कारों की,

मेरे सामने आ कर खड़े हो जाते हैं,
सारे स्नेह संबंधों को ज़बरन,

निगल लेने वाले,
काले काले भयानक जंगली अज़गर,
और अपनी सत्ता के सिंहासन के लिए,
भारत माँ का चीर हरण करने वाले,
दुःशासनी, अभिमानी सौदागर,
मुझे अपने चारो ओर दिखाई देते हैं,
रावण, कंस और कौरवों के,
अत्याचारी, अधर्मी वेशधर,

वन्दिनी बन जाती है,
मेरी चंदनी लेखनी,
क्रूर, कराल नागपाशों में,
साम्राज्ञी से सहसा बन जाती है वह,
डरी सहमी सी सेविका, असहाय,

लेकिन...
लेकिन मैं... मैं कभी नहीं बनने दूँगी,
अपनी स्वाभिनी सी लेखनी को,
बलात् किसी की अनुगामिनी,
मैं कभी नहीं लगने दूँगी कोई भी
विराम चिन्ह उसकी अपनी,
स्वाधीन संवेदनाओं के आगे,
वह बहती रहेगी निरन्तर एक नदी की तरह
पूरी तरह स्वच्छंद और निर्बंध,

यह मेरी भीष्म प्रतिज्ञा है,
अपने आप से,

मैं लिखूँगी और,
एक दिन निश्चित ही लिख पाऊँगी,
अपनी स्वाधीनता का मनचाहा स्वागत गीत,
वह गीत संगम होगा,
मेरे शब्दों, अर्थो और अनुभूतियों का,
वह होगा एक अमृत कलश की तरह,
अपनेपन के अजस्त्र अमृत से भरा,
वह एक असीम रत्नाकर होगा,
भारतीय जीवन मूल्यों की,
अमूल्य मणियों का,

उस स्वागत गीत में आदि से अंत तक,
भरी होगी एक स्वर्गिक सुगंध,
हमारी संजीवनी सूक्तियों की,
सचमुच वह होगा,
हमारी योगभूमि का
पूरा सांस्कृतिक इतिहास जैसा,
वह केवल कोई गीत नहीं होगा,
वह होगा मेरी राष्ट्रीय अस्मिता का पर्यायवाची,

लेखनी होती है सदा,
आदिशक्ति, शब्द ब्रहम की

उसकी हर यात्रा ध्रुवतारा होती है,
बस तुम यह याद रखना कि,
तुम्हें भी इस गीत का एक छंद बनना है,
और प्रणाम करना है,
अपनी भारत माँ को, अगले वर्ष,
मेरे साथ ही,
बस इतना ही

जागो, हे ऋतम्भरा!

नारी,
तुम हो सृजन-शक्ति,
आपूरित कर दो, पुरुष-प्राण,
प्रतिबंध तोड़ मिथ्या जग के,
सँवरे श्रद्धा की,
पूर्ण सृष्टि,

नारी,
तुम हो अनुराग-मूर्त्ति,
हर रिक्त हृदय को भर दो फिर,
अनुबंध छोड़ अपने घर के,
बिखरे कन कन में,
नेह-दृष्टि,

नारी,
तुम हो सौन्दर्य दिव्य,
आह्लादित कर दो विश्व-हृदय,
संबंध जोड़ जग-जीवन से,
बरसे गीतों की,
सरस वृष्टि,

नारी,
तुम हो स्वयं सिद्ध,
अंकित कर दो निज कीर्ति-लेख,
सब पंथ मोड़, सन्देहों के,
विहँसे समता की,
शुभ संसृति,
जागो, हे आदि शक्ति!
जागो हे ऋृतम्भरा!

पंक्तियाँः ग़ज़लनुमा

(1)

दिन कट रहे हैं, भागते भागते,
रात बीती मग़र, जागते जागते,

ख़ुद को देखा नहीं, आइने में कभी,
रह गए और को, जाँचते जाँचते,

सिर्फ दो ग़ज जमी ही बहुत थी मगर,
काट दी उम्र ही, माँगते माँगते

ढाई आख़र, पढ़े ही नहीं प्यार के
मर गए पोपियाँ, बाँचते बाँचते,

ज़िन्दगी दर्द की हमसफर बन गई,
थक गए वक्त को, काटते काटते

(2)

सभी चिरागों तले अँधेरे हैं, क्या कहिए?
सभी चेहरों पर चढ़े चेहरे हैं, क्या कहिए?

कंस, रावन, दुःशासन, सभी राजा बने,
कैसे सुनें? पैदायशी बहरे हैं, क्या कहिए?

लाखों किए हैं काग़जी ऐलान अब तक,
चले थे जहाँ से वहीं ठहरे हैं, क्या कहिए?

ये किन्नर क्या करेंगे हिफाज़त हमारी?
ये तो चमचे हैं, सिर्फ मोहरे हैं, क्या कहिए?

काठ की पुतली नहीं, दहकती होली बनो,
जला दो उन सबको जो सिरफिरे हैं, क्या कहिए?

(3)

एक सा नहीं रहता है, वक़्त बदलता है
सुबह चढ़ा जो सूरज, वो साँझ को ढलता है,

कभी चमन में झरती थी रसीली चाँदनी,
अब वहाँ पर रात में अलाव जलता है,

यों तो दर्द भी ज़रुरी है, ज़िन्दगी के लिए
काँटों से गुज़र करके ही, गुलाब खिलता है,

याद जब भी आती है अपनों की बेरुखी,
आँसुओं का दरिया, ख़ुद बह निकलता है,

मेरी ख़ता यही कि सब पे एतवार किया,
सबने कहा था प्यार से प्यार मिलता हैं,

(4)

हमसफर भी अब शुबह करने लगा है,
आदमी से आदमी डरने लगा है,

हाथ में पतवार है जिसके वही,
नाव को मँझधार में करने लगा है,

किस क़दर हैं बेशरम वो, क्या कहें?
सामने आकर दुआ करने लगा है,

आग नफरत की जला देगी चमन,
अब दिलों में भी धुआँ भरने लगा है,

आदमी का एक रिश्ता है ज़मीं से,
आदमी फिर क्यों दग़ा करने लगा है?

(5)

आग जब से घर में लगी है,
धुआँ, धुआँ सी ज़िन्दगी है,

चंद साँपों ने ज़हर उगला,
मौत आदमी की हुई है,

कल सामने पूरा शहर था,
अब हवा भी अज़नबी है,

एक दहशत, एक ख़ामोशी,
यह लहू की तिश्नगी है,

मत बोइए नफरत यहाँ पर,
यह मोहब्बत की ज़मीं है,

(6)

लोग अपनी बात पर अड़े हैं,
वे नहीं, हम उनसे बड़े हैं,

शीशे के घर हैं सबके मगर,
हाथ में पत्थर लिए खड़े हैं,

दावा था कल तक उसूलों का,
आज दुश्मन के घर पड़े हैं,

आदमी हों तो कुछ कहें उनसे,
दरअसल वे चिकने घड़े हैं,

ज़िन्दगी सियासत नहीं, यारों,
ईमान के रिश्ते बड़े हैं,

(7)

अँधेरें इस क़दर हावी हुए हैं,
हम खिलौने, दूसरे चाभी हुए हैं,

जो नहीं उतरे नदी में आज तक,
वे हमारी नाव के माँझी हुए हैं,

चेहरे बदल लेना सियासत है,
एक मुश्किल खेल पर आदी हुए हैं,

अब नहीं मौसम शराफत के बचे,
चोर, साहूकार सब साझी हुए हैं,

हम रहेंगे तो रहेगा देश भी,
एक मत से फिर सभी राज़ी हुए हैं,

(8)

देखिए, हम कितने सुधर गए हैं,
आग इधर लगी, हम उधर गए हैं,

कश्तियों की किस्मत में था डूबना,
नदी जब भी चढ़ी, हम उतर गए हैं,

हादसे होते रहे हैं इस जमीं पर,
हम हमेशा आस्माँ से गुज़र गए हैं,

लोगों की प्यास का अब हम क्या करें?
नक्शे कुओं के चूहे कुतर गए हैं,

देश के अंदेशे में दुबला हुआ हूँ मैं,
हवा जिधर वही, हम उधर गए हैं,

(9)

आजकल ऐसे दल बदलने लगे हैं लोग,
जैसे हवा के संग चलने लगे हैं, लोग,

ख़ाली हैं मुद्दतों से सबकी हथेलियाँ,
सिर्फ बातों से उनकी बहलने लगे हैं लोग,

कैसी अज़ब हवा चली चन्दन के गाँव में,
कलियों को बिला वज़ह मसलने लगे हैं लोग,

रिश्तों में एतबार की ख़ुशबू नहीं रही,
दोस्तों के नाम से उबलने लगे हैं लोग,

मोहब्बत की सरज़मीं को क्या हुआ ख़ुदा?
नफरत की आग से अब जलने लगे हैं लोग,

सपनों से जी को कब तक बहलाया जाय?
रोशनी के लिए अब, दिया जलाया जाय,

(10)

ख़ुद रहे हैं काग़ज़ो पे, हज़ारों कुयें लेकिन,
पानी की जगह उनको क्या पिलाया जाय?

खिड़कियाँ है बंद, दरवाज़े नहीं खुले,
किसको दें आवाज़, किसको बुलाया जाय?

ग़ैरों ने दुश्मनी की, हमने बहुत सही,
अपनों ने किए वार, कैसे भुलाया जाय?

माना कि आजकल मौसम नहीं वसंत का,
फिर भी फूल प्यार का, कैसे खिलाया जाय?

(11)

आदमी धुआँ नहीं, गरम मशाल है,
इस हवा में क्यों बुझे? यही सवाल है,

रोशनी कभी कहीं बिकी नहीं, थकी नहीं,
जुग़नुओं ने क़ैद की, यही मलाल है,

अदालतों में पेश थे, जुर्म के लिए
रहनुमा इमान के, यही क़माल है,

ज़िन्दगी के रंग तो बेहिसाब हैं,
धूल भी मज़ार की, बनी गुलाल है,

दोस्ती के नाम पर चलो गले मिलें,
हाथ जो उठा सके, नहीं मज़ाल है,

(12)

हम खड़े दस्तकें देते रहे,
वे घोड़ा बेचकर सोते रहे,

हमने चमन के काँटे बीने,
वे सियासत के लिए बोते रहे,

लोग प्यासे मरे हैं गाँव में,
वे काग़ज़ के कुयें ढोते रहे,

बस्तियाँ जली हैं हरिजनों की,
वे नई कोठी में, रोते रहे,

वे चिपके हैं अपनी कुर्सी से,
चुनाव बाक़ायदा होते रहे,

(13)

लोग जो काग़ज़ के कमल हैं,
वो आजकल बड़े सफल हैं,

जन्म से अब तक पड़े जो सूखे,
वे रेत के टीले, बादल हैं,

औरों के लिए तुले फूलों से,
बहुरूपिये हैं, कुशल हैं,

काग़ज़ की कश्तियाँ बाँटी हैं,
वो किनारे खड़े महल हैं,

कैसे उगेंगी फिर नई फसलें?
सोच लें, तो उजले कल हैं,

(14)

वे मंच पर खड़े हैं,
बस इसलिए बड़े हैं,

सियासत के सब हुनर,
लड़कपन से पढ़े हैं,

लेने की आदत हैं,
उसूलों के कड़े हैं,

दल अभी बदल लेंगे,
कुछ भाव कम चढ़े हैं,

उन्हें मौसम का पता है,
हवा के साथ जुड़े हैं,

(15)

सागर में बस एक बूँद पानी है, ज़िन्दगी,
रेत के महलों की महारानी है, ज़िन्दगी,

मालूम हैं सभी को सारे पड़ाव जिसके,
ऐसे किसी सफर की कहानी है, ज़िन्दगी,

अंदाज़ ओढ़ती है हर दिन नए नए,
वैसे तो बात बरसों पुरानी है ज़िन्दगी,

अपनों की दुश्मनी से रोती है उम्र भर,
बदनाम बस्तियों की ज़वानी है, जिन्दगी,

मानो तो ज़िन्दगी के एहसान कम नहीं,
वैसे तो मौत की मेहरबानी है, ज़िन्दगी,

(16)

झील का ठहरा हुआ पानी है, ज़िन्दगी,
ढल गई तो लौटकर आनी नहीं है, ज़िन्दगी

एक छोटा सा दिया जलता रहा है रात भर,
चाँद तारों की मेहरबानी नहीं है, ज़िन्दगी,

दो बूँद आँसू भी यहाँ रामायन बने हैं,
मोतियों ने सिर्फ पहचानी नहीं है, ज़िन्दगी,

नीम, काँटों से भरे मौसम यहाँ कुछ कम नहीं,
चन्दनी या जाफरानी ही नहीं है, ज़िन्दगी,

उम्र भर पीकर ज़हर कुछ लोग जीते हैं अभी,
मौत की हर रोज़ अगवानी नहीं है, ज़िन्दगी,

(16)

फूलों में कँवल होते हैं, ये दोस्ती के रिश्ते,
मोती से धवल होते हैं, ये दोस्ती के रिश्ते,

अपनों से कहीं ज्यादा, अपने दिल के क़रीब,
हमदर्द असल होते हैं, ये दोस्ती के रिश्ते,

चालें न शतरंज की यहाँ अज़माइएगा आप,
अमृत से गरल होते हैं, ये दोस्ती के रिश्ते,

टूटे अगर तो फिर न जुड़ेंगे गाँठ के बिना,
अंगद से अटल होते हैं, ये दोस्ती के रिश्ते,

दुआयें अपने दिल की, कैसे बयाँ करें हम?
शेर नहीं ग़ज़ल होते हैं, ये दोस्ती के रिश्ते,

(17)

इस हवा में घुला कोई ऐसा ज़हर,
गंध के गाँव को लग गई है नज़र,

ओस की बूँद से फूल संबंध थे,
आज किसने छुआ जो गए सब बिखर?

बाँसुरी से बजे वर्ष कल तक यहाँ,
बेसुरा क्यों हुआ गीत का यह सफर?

नेह का नीड़ था, गुनगुनी छाँह थी,
छाँट दी पत्तियाँ क्यों इधर से उधर?

द्वार तो बंद थे, गंध सौगन्ध थी
खिड़कियाँ खोल दीं क्यों चुराकर नज़र?

मीत चन्दन यहाँ, नाग सन्देह है
डँस न ले फिर कहीं ज़िन्दगी की डगर?

काल की त्रासदी, प्रश्न विश्वास का,
एक उत्तर यही, हम रहें हमसफर

(18)

सिंधु का जल मिला, आचमन के लिए,
दर्द का सिलसिला, संचयन के लिए,

आँख के आँसुओं को मरुथल मिला,
प्राण तरसा किए हैं, स्वजन के लिए,

प्रेम के छंद हैं दिग्भ्रमित बंधुओं!
एक गिरवी क़लम है, सृजन के लिए,

मंच पर सब बजाते रहे बाँसुरी,
कृष्ण कोई नहीं अंजुमन के लिए,

हर तरफ हैं दशानन, दुःशासन यहाँ
एक वातावरण है, हरण के लिए,

रूप पर आवरण, गंध पर आवरण,
सिर्फ काँटे बचे हैं, सुमन के लिए,

अक्षितिज धुंध है आज संदेह की,
कोई सूरज बनो अब चमन के लिए,

(19)

मेरा आँगन क्वाँरा होता, यदि तुम याद न आते,
मैं शायद आवारा होता, यदि तुम याद न आते,

नाम तुम्हारा लेने का, अभ्यास बहुत था ओठों को,
मैंने राम पुकारा होता, यदि तुम याद न आते,

इन आँखों में रही उमड़ती, हरदम मौन व्यथायें,
मैं पावस से हारा होता, यदि तुम याद न आते,

भीग रहा हूँ बरसों से, सुधियों के सोंधे सावन में,
मेरा यौवन अँगारा होता, यदि तुम याद न आते,

रोम रोम में सदा सुलगतीं मधुर मिलन की यादें,
मैंने दीप सँवारा होता, यदि तुम याद न आते,

कभी अकेले घर में तुमने मुझको शपथ दिलाई थी,
मैं केवल बनजारा होता, यदि तुम याद न आते,

अपनी सौतिन आँखों में, हर रोज तुम्हें देखा है
तब दर्पन बेचारा रोता, यदि तुम याद न आते,

(20)

आप थे जो पास, दिन वसंत हो गए,
गंध से भरे भरे, दिगन्त हो गए,

आपने छुई कि देह फिर नदी हुई,
एक द्वीप थे कि अब अनन्त हो गए,

दीन, हीन रिक्त हस्त आज तक रहे,
आप क्या मिले कि हम महन्त हो गए,

शब्द, अर्थ, छंद और गीत गंध थे,
आपके बिना मग़र हम हलन्त हो गए,

दृष्टि आपकी मिली कि आँख खिल गई,
आँसुओं के अन्त फिर तुरंत हो गए,

धर्म, नीति या कि प्रीति आपकी बड़ी,
ज़िन्दगी में प्रश्न ये ज्वलंत हो गए,

(21)

दर्पणों से अब बहुत डरने लगे हैं, लोग,
पत्थरों से आज घर भरने लगे हैं, लोग,

पाषाण सी निष्प्राण हैं, संवेदनायें,
मछलियों को रेत पर करने लगे है लोग,

सूक्तियों के शव पड़े, आकाश के नीचे,
बंद अपनी खिड़कियाँ, करने लगे हैं लोग,

खो गये हैं पते शायद प्रेम-गीतों के,
बात में विष-व्यंग्य ही भरने लगे हैं लोग,

यक्ष-प्रश्नों के नहीं उत्तर समय के पास,
सर्वग्रासी प्यास से मरने लगे हैं लोग,

एक युग कामायनी का भी यहाँ था,
आज श्रद्धा का दहन करने लगे हैं लोग,

(22)

रेशम की डोर नहीं, काँटों के तार हुए रिश्ते,
भावों के भाव लगे, मेले बाज़ार हुए रिश्ते,

मन में है नेह नहीं, बातें, बस बातें,
आँगन के द्वार नहीं, सागर के ज़्वार हुए रिश्ते,

बच्चों से महके हैं, गरमी से सूखेंगे,
मेंहदी के रंग नहीं, कच्ची कचनार हुए रिश्ते,

माना था जीवन भर, शीशफूल जिनको,
साँसों की साँस नहीं, उँगली की फाँस हुए रिश्ते,

(23)

सौ साल पहले जन्मा था, प्यारा सा, इस गुलाब,
सारे चमन की आँख का तारा था, वो गुलाब,

मोतीमहल को छोड़कर जनपथ पे आ गया था,
माटी ने नाम ले के पुकारा था, वो गुलाब,

दुनिया का दोस्त था वह, हर ग़म में हमसफर,
पर दुश्मनों के वास्ते अँगारा था, वह गुलाब,

उम्मीद था वतन की वह, मंज़िल का ख़्वाब था,
हर मोड़ पे सफर का सहारा था, वह गुलाब,

आवाज़ दी थी उसको कुछ कश्तियों ने अक्सर,
तूफान में नदी का किनारा था, वह गुलाब,

इन्साफ का फरिश्ता, वह था देवता अमन का,
इन्सानियत के घर में सितारा था, वह गुलाब,

वह वक़्त की ग़ज़ल था, सूरज था, शाह था,
सौ बार हम कहेंगे, हमारा था वह गुलाब,

(24)

तुम्हें मामूली सा दस्तूर नहीं आता है,
काँच को कहना कोहिनूर नहीं आता है,

हर चीज़ दिखाते ही बता देते हो दाम,
दुकान चलाने का शऊर नहीं आता है,

चौराहों पे सजा दिए हैं, घर के चि़राग़,
शहरों में रहते हो, ग़रूर नहीं आता हैं,

हर आदमी ने पी है सियासत की शराब,
कैसे पीते हो तुम जो सुरूर नहीं आता है?

सब लोग धोते हैं बहती गंगा में हाथ,
तुमको तो इतना भी हुज़ूर नहीं आता है,

(25)

मेरे चमन में आयेगा, मौसम गुलाब का,
मुझको तो उस हँसी नज़र पे एतबार है,

दोस्तों की बेरूख़ी का, अब क्या करें गि़ला?
ज़िन्दगी में दर्द भी तो, बेशुमार हैं,

बरसों गुज़र गए हैं, उनकी याद में तन्हाँ,
आयेंगे मेरी मौत पर, यह इन्तज़ार है,

हमको अपनी जान से ज़्यादा अज़ीज वो,
उनको हमारा ज़िक्र तक भी, नाग़वार है,

दिल के बुरे नहीं हैं, ना़जुक मिज़ाज हैं,
ये बेरूख़ी तो उनकी अदा में शुमार है,

किसको दिलाऊँ मैं यकीं अपने हाल का?
वह बेबफा तो खुद मेरा राज़दार है,

मिलते हैं ग़ैर की तरह महफिल में वो 'सरोज'
आए वो मेरे ख़्वाब में, हज़ार बार हैं,

ज़ब से देखा है मज़हबी आग में जलता हुआ शहर,
मेरी ग़ज़लें ही नहीं, आँसू भी ख़ामोश हो गए हैं,

(26)

कितनी सर्द थीं, लम्बी थीं, छत पे गुज़री थीं जो रातें,
लगता था दिन के उजाले भी स्याहपोश हो गए हैं,

बरसों खेले थे जिन गली कूचों में सगे यारों की तरह,
रास्ते वही हैं मगर अब दुश्मनी के आगोश हो गए हैं,

कितना सन्नाटा था, वस्तियाँ वीरान थीं इस क़दर,
गोया कि घर छोड़ के लोग ख़ानाबदोश हो गए हैं,

इतनी पी ली है यहाँ आदमी ने सियासत की शराब,
कि सरेआम बाज़ार में नंगे मदहोश हो गए हैं,

कल तक जहाँ की दोस्ती इस ज़हाँ में बेमिसाल थी,
रहनुमा वहीं के ख़ुदा, कसम, क़ौम फरोश हो गए हैं,

(27) (साम्प्रदायिक दंगो पर)

ख़ून में डूबी हुई थी शाम, क्या कहिए,
हर गली कहती रही श्री राम, क्या कहिए,

सर पर क़फन बाँधे हुए, सैलाब था इक आग का,
ज़िन्दगी थी मौत के ही नाम, क्या कहिए,

ऊपर छतों पर तोप थीं, नीचे गली में गोलियाँ,
जानते थे ज़िद्द का अंजाम, क्या कहिए,

ज़ज्बात का ऐसा ज़नून, आज तक देखा नहीं था,
हर शख़्स को था एक ही काम क्या, कहिए,

धो रहे थे लोग उनके पाँव, अपने आँसुओं से
आरती होती रही अविराम, क्या कहिए,

चारो तरफ फैला हुआ था जाल उस शैतान का,
आदमी से हो गया नाक़ाम, क्या कहिए,

वादा करो जारी रहेगा, यह सफर अंजाम तक,
बस यही था आखिरी पैग़ाम, क्या कहिए,

घर से चले थे नाम लेकर राम का वे सभी,
अंत में भी बस कहा 'श्री राम', क्या कहिए,
(27) (अयोध्या के गोली कांड पर)
साँप, बिच्छू, भेड़िया है, गिदध, गीदड़, बाज़,
चेहरे बदल कर आदमी सब कुछ बना है आज़,

घर और बाहर कहीं भी सीता नहीं महफूज़ है,
कौन जाने कब कहाँ से आ जाये रावण आज,

हैवानियत के हादसों से, रोज़ घायल ज़िन्दगी,
टूटी पड़ीं सारी हदें, इन्सानियत की आज,

कितनी घिनौनी हो गई है शकल भरदों की,
खींचते हैं हर सड़क पर औरतों को आज,

गरम लावे की तरह फट पड़ा है सैलाब जो,
तोड़ देगा, वहा देगा, सब कुरसियों को आज,

स्याह धब्बों से भरा हैं अब चेहरा सियासत का,
तय करेगा देश का कल, आम जनता आज,

(28)

दिल की बात कहें हम कैसे? अल्फाज़ नहीं मिलते हैं,
कैसे यारी हो उनसे? जिनसें ज़ज्बात नहीं मिलते हैं,

दरिया को देखा है तुमने? ख़ामोशी से बहता है,
वे चुप ही रहते हैं जिनको हमराज़ नहीं मिलते हैं

गुंडे, मुस्टंडे चोर, मवाली, सब के सब बैठे हैं
लोक सभाओं में अन्ना जैसे जाँबाज़ नहीं मिलते हैं

कितनी ऊँची नाक हो गई, इन भीख माँगने वालों की,
दो चार रुपये लेने वाले मोहताज़ नहीं मिलते हैं,

दौलत के ढेर लगे हैं लेकिन आदमी बहुत अकेला है,
सोने चाँदी से अपनों के एहसास नहीं मिलते है,

(29)

उम्र के इस दौर में, मुश्किल हुआ बाक़ी सफर,
कट जायेंगी कुछ दूरियाँ, सब्र से जी लें अगर,

जितना बने करते रहें तन, मन और धन से,
टूट जायेंगी कुछ आँधियाँ, बहुत कम बोलें अगर,

किसी रिश्ते में नहीं अब प्यार की ख़ुशबू रही,
मिल जायेंगी कुछ चिटिठयाँ, दर्द को पी लें अग़र,

शाम के सूरज हुए हम, अब ढले तब ढले,
कट जायेंगी तनहाइयाँ नींद भर सोलें अगर,

(30)

जाने क्या से क्या हो गया आदमी?
रोशनी था, धुआँ हो गया आदमी,

नोचकर वादियों को नंगा किया,
होश में बेवफा हो गया आदमी,

काटकर बस्तियाँ ज़ख्म लाखों दिए,
जंगली भेड़िया हो गया आदमी,

छीन कर चैन सबका, हँसता रहा,
किस क़दर बेहया, हो गया आदमी

प्यार की था ग़ज़ल खुशबुओं से भरी,
आजकल मरसिया हो गया आदमी,

आओ, खोजें उसे दोस्तों की तरह
कब कहाँ खो गया? खो गया आदमी,

(उत्तराखंड की त्रासदी पर)

यह मेरा शहर है

पर्वतों के पास है, गंगा की लहर है
हर तरफ हरा-भरा, यह मेरा शहर है,

दुनिया में नाम है इसके शाही काम का,
पीतल पे खिल रहा, हाथों का हुनर है,

ग़ज़लों के संग, गीत भी बेमिसाल हैं
हिंदी की जान है, उर्दू का जिग़र है,

कोई नहीं है गैंर, न हिंदू न मुसलमाँ,
रिश्ते सगों से हैं, अपनी सी नज़र है

जयहिंद या जबाँ पर, सीने पे गोलियाँ
कुरबानियों की यह ज़मीं, सबको ख़बर है

यू.पी. की शान है, यह गुमान देश का,
डालर का ख़ज़ाना, मेहनत का सफर है,
यह मेरा शहर है

(मुरादाबाद उ0प्र0 के लिए 6 अप्रैल 2018)

श्रदधांजलि
हमारे बाबू जी

श्रदधांजलि

श्रद्धांजलि

हमारे बाबू जी

बाबू जी!
मेरे पास एक भी शब्द नहीं हैं,
जो नाप सके आपके विशिष्ट व्यक्तित्व को,
आकाश और सागर,
तो बहुत बौने हैं,
आपकी ऊँचाई और गहराई के सामने,
कई विशेषण एक साथ मिलकर भी
खड़े नहीं हो सकते
आपके क़द के बराबर,
आप अद्वितीय थे,
अनुपमेय,
अनन्य,

बाबूजी!
मैंने आपको आपकी डायरियों से ही,
भली भाँति जाना है,
डायरी के हर पृष्ठ की हर पंक्ति के साथ,
मुझे लगता रहा, जेसे मैं पढ़ रही थी,
भागीरथ की अखंड तपस्या का विराट विवरण,

मेरे सामने थे नीलकंठ-शंकर के,
विषपान वाले रोमांचक प्रसंग,
मैं देख रही थी चक्रव्यूह में
महारथियों से घिरे,
आघात पर आघात झेलते अकेले,
पर आत्मसम्मान का रथ चक्र लिए,
अंत तक युदध करते
साहसी अभिमन्यु का चित्र,
मेरा रोम रोम भावाभिभूत था
आपकी संघर्ष-गाथा से,

बाबू जी!
मेरे जितने भी क्षण बीते हैं,
आपकी डायरियों के साथ,
हर क्षण यही एहसास हुआ
जैसे ममता का मखमली आसन बिछा है,
ऊपर से झर रही हैं, वात्सल्य की फुहारे,
मैं बैठी हूँ असंख्य यज्ञ-कुंड़ों के बीच,
मेरे चारों ओर महक रहे हैं,
शब्दों के शतदल,
मानस की चौपाइयाँ,
विवेकानंद के वचन,
गाँधी जी की सूक्तियाँ,
मनीषियों के उदाहरण,
अंग्रेजी कवियों की कवितायें,

और इन सबके बीच किसी रत्नहार में,
पिरोई गई, कौस्तुम मणियों की तरह हैं,
आपकी अपनी लिखी पंक्तियाँ,
जो अब स्नेहभरी दीप वर्त्तिकायें हैं,
हमारे भावी कर्म-पथ के लिए,

बाबू जी!
आपका बचपन उन्मुक्त रहा,
कीर्त्तिमानों से युक्त थी किशोर वय,
ज्ञानार्जन में व्यस्त रहा यौवन,
कुल के मंगल को ध्यान में रखते हुए,
आप आजीवन करते रहे प्रयत्न,
बिना बोले चुपचाप,
रात दिन करते रहे परिश्रम,
बिना विश्राम के,
पल पल प्रयास किया,
पूरे परिवार की संपन्नता के लिए,
भुला दीं आपने अपनी सारी सुख-सुविधायें,
चलते रहो, चलते रहो को बना लिया मूल मंत्र,
कर्म के इस यज्ञ में,
निरन्तर देते रहे आहुतियाँ,
अपने तन-मन की,
स्वयं समिधा बन कर,
समर्पित हो गए,
घर को घर बनाए रखने के लिए,

इस काल खंड में,
प्रमाणित किया था आपने,
अपने को अपने ही समक्ष,
अंत तक रहा आपका आत्मविश्वास,
अटूट, अविचलित,

बाबू जी!
आप जन्मजात संत थे,
छोटी सी आयु से ही थी,
बड़ी बड़ी जिज्ञासायें आपके मन में,
क्या हैं आत्मा-परमात्मा?
जीवन-मृत्यु?
भाग्य-पुरुषार्थ?
भावना-कर्त्तव्य?
क्या है मनुष्य के जीवन का उद्देश्य?
क्या है उसका वास्तविक गन्तव्य?
कैसे मिल सकता है मन का सुख?
मन की शांति कैसे?
बार बार संबोधित किया है स्वयं को,
बार बार पूछा है अपने से,
क्या कुछ सिक्कों का संग्रह ही है
मेरे संसार में आने का प्रयोजन?
लगातार खोजते रहे आप,
अपने प्रश्नों के उत्तर,
बार बार करते रहे आत्म मंथन,

क्यों नष्ट कर रहा हूँ मैं अपना,
यह अनमोल जीवन?
क्यों व्यर्थ गँवा रहा हूँ अपना
समय अपनी साँसे?
क्यो जी रहा हूँ इस तरह निरुद्देश्य?

बाबू जी!
आप जन्मदाता ही नहीं विधाता थे,
अपने वंशघरों के,
हम सबके मन की धरती पर,
आपने बोए थे,
उदात्त संस्कारों के बीज,
आपने अपने नन्हें अंकुरों को,
सींचा था अपनी ममता के,
शीतल जल से,
हमारे बचपन में ही बुन दिए थे,
हमारे भविष्य के सुनहरे सपने,
हम चारों के लिए निर्धारित कर दी थीं,
उनकी कर्म-दिशायें,
उस सामंती युग में ले लिया था,
लड़कियों की शिक्षा का क्रांतिकारी निर्णय,
उन्हें पूरी स्वतंत्रता दी थी,
दिशा-परिवर्तन और लक्ष्य-चयन की,
कितना मुक्त चिंतन!
कितना आत्ममंथन किया होगा आपने!

एक ही कामना थी आपकी,
हम चारों के लिए,
कि हम सब रेखांकित करें अपने आपको,
अपनी उज्जवल उपलब्धियों से,
अपने को प्रतिमान बना दें प्रतिभा का,
हमारी कीर्ति की गंध हमारा परिचय दे दे,
हमारे आने से पहले,
देखते ही सब जान लें बिना बतायें,
कि हम जन्मे और पले हैं,
एक प्रज्ञा-पुरुष की छत्रछाया में,
कि हम वंशज हैं, एक
असाधारण दिव्य क्रान्ति के,

बाबू जी!
आपने चाहा था कि आपकी संतानें,
सच्चरित्र हों, संयमी, सदाचारी,
सेवा-भावी, राष्ट्र प्रेमी,
आदर्श नागरिक,
आपने चाहा था कि,
आत्मविश्वास की अलौकिक दीप्ति से,
आलोकित हों उनके तन-मन,
उनके हृदय में हो अटल संकल्प,
अविचल जीवन-मूल्य,
अपराजिता हो उनकी आस्था,
आत्मा-परमात्मा पर,

वे स्वयंसिदध हों,

बाबू जी!
स्वीकार किया महाकाल को भी,
आपने प्रभु के प्रसाद की तरह,
छोड़ दिया घर-बार
वीतराग सन्यासी सा (1954 में)
अपनी आसन्न मृत्यु को मान लिया,
अपना ही प्रारब्ध,
किसी को नहीं दिया कोई दोष,
आह! बाबूजी!
आपके वनवास के वे पाँच वर्ष!
कितने दारुण थे वे दिन!
कितने असहाय थे आप!
कितने अकेले
किंतु और अधिक
समर्थ हो गई थीं आपकी आस्था,
पूरे विश्वास से सौंप दी थी
अपनी पतवार परमस्रष्टा को,
और बन गए थे दृष्टा स्वयं,
अपने दुर्भाग्य के,
आपने प्रतीक्षा की थी
अपने जाने की,
जीने की दृढ़ इच्छा के साथ,
मृत्यु को भी लौटना पड़ा था कई बार,

आपकी जिजीविषा के द्वार से,
हर चरण रहा
आपके जीवन का
अद्भुत ,
असाधारण,

बाबू जी!
आप बुद्धि, हृदय और कर्म के,
पवित्र संगम थे,
आप सदा रहे स्थितप्रज्ञ,
कभी नहीं खोया अपना संतुलन,
छोटा-बड़ा हर निर्णय लिया,
अपने सद्विवेक से,
बार बार परखा उन्हें,
तर्क की कसौटी पर,
आप निर्भय थे, दूरदर्शी, साहसी,
सत्य का साक्षात्कार किया सहजता से,
स्वीकार किया सारी वास्तविकताओं को,
बिना डगमगायें,
यथार्थ के आधार पर,
निर्धारित कीं भावी योजनायें,
कभी नहीं छला आपने अपने को,
मिथ्या कल्पनाओं और
असंभव दिवा-स्वपनों से,
आने वाले निश्चित कल के लिए,

हर पल अपने को तैयार किया,

बाबू जी!
सचमुच वंदनीय है आपका विश्वास,
आप थे सरल हृदय, स्नेही, संवेदनशील
सबको दिया हर संभव सहयोग,
बिना किसी भेद-भाव के
समाज-सेवा के लिए सदैव तत्पर रहे,
आत्मप्रदर्शन के,
पक्षपाती नहीं थे आपका
आप गंभीर थे, एकान्तप्रिय,
शान्त, मितभाषी, स्वाध्यायी,
अपने लिए कभी कोई अपेक्षा,
नहीं की किसी से,
दूसरों का ध्यान रखा पूरी सतर्कता से,
कभी नहीं आभास होने दिया,
अपने अन्तर्द्वद्व का किसी को भी,
सारा गरल पिया अकेले ही,
परमात्मा की कृपा पर पूरी आस्था थी,
असीम था, अगाध था
ईश्वर पर आपका विश्वास,
कर्म ही पूजा थी आपके लिए,
'कर्मष्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन्
गीता का यही कथन,
सूत्र वाक्य था जीवन का,

इसी को माना था आपने,
अपने जन्म का प्रयोजन,
अविरत कर्मनिष्ठा ही रही
आपका लक्ष्य आपका ध्येय,

बाबू जी!
निरन्तर शिखरों की ओर चढ़ने की,
चेष्टा करते रहे आप,
आपकी यात्रा आपके,
जीवनादर्शो की दिशा में,
चलती रही, चलती रही,
बिना रुके बिना थके,
अविराम,
निर्विराम,
बाबू जी, बाबू जी!
यह शतप्रतिशत सच है कि आज भी,
आप एक ख़ुशबू की तरह,
हम सबके आस-पास ही हैं,
हर समय हम एहसास करते है इसे,
अपने हर संकट में,
हमने महसूस किया है,
अपने सिर पर,
आपकी ममता क कोमल स्पर्श,
जब भी कभी हमारे पाँव,
लड़खड़ाये हैं,

आपने चुपचाप पीछे से आकर,
पकड़ ली हैं हमारी उँगलियाँ,
कभी कभी तो ऐसा लगता है जैसे,
आपने हमारे लिए ही बनाया था
अपने आपको ऐसा,
कर्मयोगी, स्थित प्रज्ञ, दूरदर्शी, निर्भय,
और साहसी,
क्योंकि चाहते थे आप,
हमारे सामने रखना,
एक जीता जागता आदर्श चरित्र,
ओह!
कितनी गहरी आसक्ति थी,
अपनी संतानों के प्रति!
ओह! कितनी गहरी चिंता थी,
उनकों सँवारने की,
कितना गहरा और गहरा,
कितना गहरा,
कर्त्तव्यबोध था उनके लिए,
शायद अंत के पाँच वर्षों में
अपने चारों बच्चों का भविष्य ही,
बन गया था आपका लक्ष्य,
आपका उद्देश्य,
हमें अच्छी तरह याद है,
कि आपने बार बार हाथ फैलाये थे,
भगवान के आगे,

बार बार एक ही याचना थी,
हे परमपिता! मुझे कुछ साँसे और दे दो,
कि मैं खड़ा कर सकूँ अपने बच्चों को,
उनके अपने पैरो पर,
कभी नहीं माँगा था आपने,
अपने लिए अपना जीवन,

बाबू जी!
काश! हमारे बीच होते आप आज,
तो स्वयं देखते अपनी आँखों से,
कि यथाशक्ति प्रयत्न किया है,
हम चारों ने अपने आपको,
आपका उत्तराधिकारी बनाने के लिए,
आप और केवल आप ही हैं,
हमारी आत्मशक्ति का अक्षय स्त्रोत,
आपकी स्मृति से ही मिली है हमेशा,
सही दृष्टि सही दिशा हमें,
आपके स्मरण से ही
सदा आगे बढ़ते रहे हैं,
हम सबके चरण,
हमारे नाम के साथ जुड़े हैं
जितने भी विशेषण,
वे आपके ही आशीष का फल है,
हमें हमारा यह रूपाकार
आपने ही दिया है हमें,

आप ही पिता हैं,
आप ही हैं हमारे कर्त्ता और,
निर्माता,

बाबू जी!
आज पूर्णतया सिदध हो गई है,
मेरी लेखनी असहाय, असमर्थ,
एक छोटा सा अंश भी,
नहीं बाँध पाई मैं आपके,
बड़प्पन का,
जो कुछ लिखा गया,
वह तो बहुत कम है,
उससे सौ गुना ज़्यादा रह गया,
अनलिखा ही,
क्या करूँ?
शब्दों से परे है,
आपकी ममता और,
महानता,

बाबू जी!
हमारे रोम रोम में समाई हुई हैं,
आपकी अनंत छवियाँ और स्मृतियाँ,
हम चारों आज एक ही प्रार्थना करते हैं,
कि हे ईश्वर! हमें अग़र अगला जन्म देना,
तो देना यही वात्सल्यमयी गोद,

ममता भरी यही छत्रछाया,
देना हमें केवल एक ही विशेषण
कि हम सब वंशधर हैं,
कांति के....
कि हम सब
साक़ार स्वप्न हैं,
कांति के
कि हम सब
केवल फूल हैं,
उस बीज के,
जो बोये थे,
कांति ने

बाबू जी!
हम कुछ भी नहीं,
केवल प्रतिविंब है
हैं कांति के,
हमें गर्व है,
गौरव हैं,
अभिमान हैं,
कि
हम वंशज हैं,
हम संतानें हैं,
एक प्रज्ञावान
कर्मयोगी, स्थित प्रज्ञ,

दूरदर्शी,
अनन्य, अनिर्वचनीय,
अनुपम, मेधावी,
गुणातीत, धर्मातीत,
महापुरुष,
कांति के,
श्री कांति मोहन गर्ग के,

सरोज
लीला
अरूण
कुमुद
[21 जुलाई 2021 उनकी निधन तिथि पर]